ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 21 मई 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 21 मई 2017 से 27 मई 2017

ज्येष्ठ कृ. – 10 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 72, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. यमुनानगर में हुआ सामुदायिक यज्ञ का आयोजन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, यमुनानगर की नवनिर्मित यज्ञशाला का आयोजन किया गया जिसमें यमुनानगर के आर्य समाजों के गणमान्य व्यक्ति उपस्थित हुए। वैदिक ज्ञान आश्रम के संस्थापक स्वामी सच्चिदानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में हवन के उपरान्त श्रीमती तृप्ता देवी, श्रीमती तारा सैनी, श्रीमती सुदर्शन सचदेवा, श्रीमती विजय ठाकुर तथा विद्यालय के संगीत शिक्षक सन्नी चोपड़ा द्वारा आर्य समाज

से सम्बन्धित अनेक भजन प्रस्तुत किए गये। भजनोपरान्त मॉडल टाऊन आर्य समाज के मंत्री श्री यश वर्मा द्वारा तप, स्वाध्याय तथा निष्काम भाव से कर्त्तव्य के निर्वाहव हेतु ज्ञान वर्धक वक्तव्य दिया गया। तदोपरान्त प्रोफेसर के.सी. ठाकुर (प्रधान वैदिक ज्ञान आश्रम जगाधरी) द्वारा सकारात्मक सोच पर विचार प्रस्तुत किए गये।

विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री वी.एस. ठाकुर ने सभी आगन्तुकों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि समय–समय पर ऐसे आयोजन आयोजित किए जाने आवश्यक हैं क्योंकि ये जन–मानस के मन में एक नई चेतना जाग्रत करते हैं।

महात्मा हंसराज जी की जयंती पर, कैथल में भव्य शोभा यात्रा

आर्य समाज, ओ.एस. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, कैथल के तत्त्वावधान में तप व त्याग के प्रतीक, देश, धर्म व जाति की निष्काम सेवा करने वाले जीवनदानी डी.ए.वी. स्कूल व कॉलेज के प्रथम प्राचार्य (अवैतनिक) महात्मा हंसराज जी की 154वीं पावन जयंती पर, कैथल में एक विशाल शोभा–यात्रा निकाली गई।

शोभा–यात्रा का शुभारम्भ विद्यालय की प्राचार्या एवं सह क्षेत्रीय निदेशिका श्रीमती सुमन निझावन ने पार्क रोड स्थित शहीद स्मारक से ओ३म् ध्वज दिखाकर शोभा–यात्रियों को प्रस्थान किया। शोभा–यात्रियों को प्रस्थान करने से पूर्व श्रीमती निझावन से समस्त उपस्थित जनसमुदाय को सम्बोधित करते

हुए महात्मा हंसराज जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके त्याग व तपमय जीवन से प्रेरणा लेकर समाज को अपनी सेवाएं अर्पित करने के लिए प्रेरित किया।

यह शोभा–यात्रा शहीद स्मारक से शुरू होकर कमेटी चौक, गीता भवन, चांदनी चौक, पुरानी सब्जी मण्डी, तलाई बाजार, रेलवे गेट एवं छात्रावास रोड से गुजरती हुई कैथल के पुराने बस स्टैण्ड पर जाकर समाप्त हुई। शोभा–यात्रा का नेतृत्व कर रहीं श्रीमती सुमन निझावन ने शीघ्रता से समापन स्थल पर पहुंच कर समस्त शोभा–यात्रियों का हार्दिक स्वागत व आभार प्रकट किया। इस शोभा–यात्रा में स्थानीय आर्य सज्जनों, अभिभावकों के अतिरिक्त विद्यालय के 1100 आर्य युवा तथा 160 के लगभग अध्यापक– अध्यापिकाओं ने भाग लिया। शोभा–यात्रा के दौरान वैदिक मंत्रों की पावन मंगल ध्वनि तथा जयघोष से नगर में अद्भूत व अवर्णनीय मनोहारी दृश्य उपस्थित हो गया था। नगरवासियों ने सड़क के दोनों किनारें खड़े होकर शोभा–यात्रियों का स्वागत करते हुए सुर में सुर मिलाकर उनके जोश व उत्साह में चार–चांद लगा दिये। इस अवसर पर विद्यालय प्रांगण में लगभग 700 आर्य कन्याओं द्वारा यज्ञ का सफलता पूर्वक आयोजन किया गया।

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर में 'आध्यात्मिकता एवं सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता' विषय पर हुई संगोष्ठी

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर के तत्त्वाधान में स्वामी दयानन्द स्टडीज सेंटर के सौजन्य से 'चिंतन व् आध्यात्मिकता और सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता' विषय पर एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का बेहद सफल और सार्थक आयोजन किया गया, कॉलेज प्राचार्या श्रीमती उर्मिल सेठी के योग्य एवं प्रेरणास्पद मार्गदर्शन में हुई इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्यातिथि के रूप में पुड्डुचेरी के भूतपूर्व लैफ्टिनेंट गवर्नर एवं कॉलेज की स्थानीय एडवाइजरी कमेटी के चेयरमैन श्री वीरेन्द्र कटारिया ने एवं गेस्ट आफ ऑनर के तौर पर पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ के

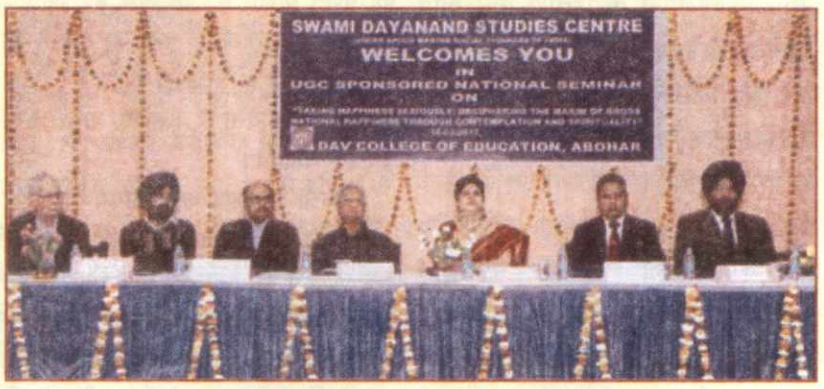

सिंडिकेट मैंबर प्रिंसिपल इक़बाल सिंह संधू ने गरिमामयी शिरकत की कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के दर्शनशास्त्र विभाग के प्रमुख प्रोफेसर आर.के. देसवाल, गुरुनानक देव यूनिवर्सिटी अमृतसर के सोशल साइंस विभाग के डॉक्टर राजेश कुमार और डॉक्टर जी.एस.बाजवा एवं श्रीगंगानगर के विख्यात आर्यसमाजी श्री रवि भटनागर इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में बतौर रिसोर्स पर्सन शामिल हुए।

वन्देमातरम् एवं डी.ए.वी. गान से इस संगोष्ठी का शुभारम्भ किया गया। कॉलेज प्राचार्या डॉक्टर श्रीमती उर्मिल सेठी ने आये हुए विशिष्ट अतिथियों का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए संगोष्ठी के उद्देश्य एवं महत्व पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला।

मुख्यातिथि आदरणीय श्री वीरेन्द्र कटारिया ने संगोष्ठी में आमंत्रित किये जाने पर संस्था का आभार व्यक्त करते हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज की विलक्षण विचारधारा को अंतर्मन में ढालने

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह – रविवार, 21 मई 2017 से 27 मई 2017
वन्दे मातरम्

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

शिला भूमिरश्मा पांसुः, सा भूमिः संधृता धृता।
तस्यै हिरण्यवक्षसे, पृथिव्या अकरं नमः।। अथर्व

ऋषिः अथर्वा। देवता भूमिः। छन्दः अनुष्टुप्।

● (**शिला**) शिला, (**अश्मा**) पत्थर, (**पांसुः**) धुलि [ही] (भूमिः) भूमि [है]। (**सा भूमिः**) वह भूमि (**संधृता**) सम्यक् प्रकार धारण की जाकर (**धृता**) [राष्ट्र के रूप में] धृत हो जाती है। (तस्यै) उस (**हिरण्यवक्षसे**) हिरण्यवक्षा, सुवर्णगर्भा (**पृथिव्यै**) भूमि के लिए (**नमः अकरं**) नमस्कार करता हूँ।

● जिस राष्ट्र–भूमि पर हम अपना तन–मन धन बलिदान करने को तैयार रहते हैं, जिसके गौरव–गीत गाते हम नहीं थकते, जिसकी निन्दा सुन हमारा चेहरा तमतमा उठता है, और जिसकी प्रशंसा सुन हम आनन्द–विभोर हो जाते हैं, उसका विश्लेषण करके देखें तो वह शिला, पत्थर, धूलि आदि का निर्जीव समूह मात्र है। वह क्या वस्तु है जो उस निर्जीव पृथिवी को सजीव राष्ट्र के रूप में परिणत कर देती है? वह वस्तु है उसके निवासियों का परस्पर संगठित होकर, सबको एक इकाई मानकर, अपने अभ्युदय के लिए उसे संधृत करना। संधृत करने में भूमि के वन, पर्वत, खेत, बाग–बगीचे, मैदान, खनिज की खानें, नदियाँ, समुद्र, सबको सजाना–सँवारना, अधिकाधिक उपयोगी बनाना,उद्योग–धधों, कल–कारखानों आदि को प्रतिष्ठित एवं विकसित करके उत्पादन बढ़ाना, प्रजा की शिक्षा–दीक्षा, चिकित्सा, सामाजिक उन्नति आदि की व्यवस्था करना सब सम्मिलित है। ऐसा करने पर वह शिला, पत्थर, धूल–मिट्टी का ढेर मात्र निष्प्राण पृथिवी सप्राण राष्ट्र–भूमि के रूप में आदृत होने लगती है। तब उसके सम्मान को हम अपना सम्मान और उसके अपमान को अपने समझने लगते हैं। उसकी एक–एक इंच भूमि की रक्षा को, उसकी चतुर्मुखीन उन्नति को, उसकी कीर्ति–प्रतिष्ठा को अन्य राष्ट्रों में उसे उच्च स्थान दिलाने को हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

भूमि 'हिरण्यवक्षाः' तो पहले से ही है क्योंकि उसके गर्भ में कहीं सुवर्ण–रजत की खानें भरी हैं, कहीं हीरे मोती, रत्न, मणियाँ बिछी हैं, कहीं मूल्यवान् तैल–कूप भरे हैं, कहीं अन्य विविध खनिज द्रव्य विद्यमान हैं। किन्तु अब राष्ट्र–भूमि का रूप धारण करने के पश्चात् तो वह सच्चे अर्थों में हमारे लिए 'हिरण्यवक्षाः' हो गई है, क्योंकि हमारे राष्ट्र द्वारा 'कहाँ कौन–सी सम्पत्ति भू–गर्भ में छिपी पड़ी है' इसका अनुसंधान करके राष्ट्रियस्तर पर उसमें से हिरण्यादि सम्पत्ति को प्रजा के हितार्थ निकाला जाने लगा है।

हे अपने वक्षः स्थलपर हिरण्य–हार से अलंकृत मणिमुक्तारत्नापलंकारधारिणी, सुजला ,सुफला, मलयज–शीतला, सदस्य–श्यामला, गौरव–मंडिता, यशस्विनी, मनोमोहिनी, समृद्धिमयी मातृभूमि! तुझे हमारा नमस्कार है, शतशः नमस्कार है।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

आनन्द गायत्री कथा

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में स्वामी जी ने कहा कि गायत्री में भी कहा गया है– 'हे भगवन् तुझे वरता हूँ।' अपने आपको तेरे अर्पण करता हूं। इसी को शरणागति कहते हैं। यह गायत्री के इस– 'वरेण्यम्' का अर्थ है। 'गोयथ–ब्राह्मण' में गायत्री के सम्बंध में ऐसी–ऐसी बातें प्रकट की गई हैं कि इन्हें देखकर आश्चर्य होता है। 'भर्गः' शब्द के दस अर्थ इस ब्राह्मण–ग्रन्थ में लिखे हैं– जिससे बड़ा कोई न हो, 'भर्गः' अन्न को भी कहते हैं, पाप का नाश करने वाला भी, भुना हुआ, पका हुआ भी, पृथिवी, अग्नि, वस्तु, वसन्त–इस प्रकार दस नाम गिनाए हैं और कहा है कि ये सब 'भर्गः' है। पृथिवी के बिना मनुष्य का निर्वाह नहीं होता।

'भर्गः' शब्द के कुछ और भी अर्थ हैं–जीवन प्रदान करनेवाला, पका देने वाला। इन अर्थों पर विचार करना चाहिए।

––अब आगे

अब गायत्री के दूसरे भाग में आइए, 'देव' शब्द की बात सुनिए। 'देव' का अर्थ है सबका 'शिरोमणि'–सबसे बड़ा। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ–प्रकाश' के पहले समुल्लास में 'देव' शब्द के सम्बन्ध में ऐसे–ऐसे रहस्य खोले हैं जिन्हें देखने के पश्चात् और कुछ भी समझना शेष नहीं रहता। सोलह बातें उन्होंने 'देव' शब्द के सम्बन्ध में लिखी हैं। उन सबका वर्णन इस समय नहीं कर सकता। केवल एक अर्थ का वर्णन करता हूँ। 'देव' का अर्थ उन्होंने 'आनन्द का देनेवाला' किया। सूर्य प्रकाश और उष्णता देता है, पवित्रता और शुद्धता देता है, अतः वह देव है। जब मैले कपड़े को पवित्र करता है, प्यास बुझा देता है, खेतों को लहलहा देता है, बंजर भूमिभाग को पुष्पों से प्रफुल्लित कर देता है, वह भी हमारा देव है। इस प्रकार तैंतीस देवताओं का वर्णन आता है हमारे प्राचीन ग्रंथों में। बाद में तैंतीस देवताओं से तैंतीस करोड बन गए। किस प्रकार यह बात हुई? तैंतीस देवता कौन–से हैं? कभी समय मिला तो इन देवताओं के सम्बन्ध में वर्णन करुँगा। आज 'देव' शब्द के केवल एक ही अर्थ का वर्णन करता हूँ। वह अर्थ है, 'आनन्द देनेवाला'। देवताओं के पास जो कुछ है वह हमारे कल्याण के लिए है। वे देव हैं। ईश्वर सबसे अधिक देता है, इसलिए सबसे बड़ा देव है– महादेव।

गायत्री का जाप करते समय 'देव' पर आओ तो यह अनुभव करो कि परमात्मा सब–कुछ दे रहा है; परन्तु केवल यह सोचने से और कहने से कि परमात्मा सब–कुछ देता है, यह देव है और महादेव है, तो कोई काम नहीं बनता। इसके साथ ही यह भी देखना चाहिए कि परमात्मा यदि देता है, मैं यदि उसके साथ सबसे बड़े गुण 'आनन्द' को प्राप्त करना चाहता हूँ, तो मेरा भी कर्तव्य है कि मैं भी किसी को कुछ दूँ। मेरे पास यदि धन है तो इस पर साँप बनकर न बैठ जाऊँ। शक्ति है तो दूसरों की रक्षा करने से पीछे न हटूँ। ज्ञान है तो दूसरों को मार्ग बतलाने में कृपणता न करूँ। गायत्री–जाप की ठीक–ठीक विधि केवल एक है कि ईश्वर को 'देव' मानकर अनुभव करो कि वह सब कुछ देता है, और फिर स्वयं भी दो। दीन को आश्रय, दुःखी को सान्त्वना, रोगी को ओषधि तुम भी दो। तुम भी देवता बनने का यत्न करो। 'गोपथ ब्राह्मण' के ऋषि ने गायत्री में 'तत्सवितुर्वरेण्यम् को तप का भाग कहा है। जब तूने वर लिया इस ईश्वर को, बिक गया तू उसके सामने तो फिर अपने लिए सुखों की याचना मत कर। दूसरों को सुख देने का कार्य स्वयं दुःख उठाए बिना होता नहीं। इसलिए 'गोपथ ब्राह्मण' ने इस भाग को तप का भाग कहा है। स्वयं दुःख उठाकर दूसरों को सुख देना– यह तप है। माँ बच्चे को बिस्तर के सूखे भाग में सुलाती है; स्वयं गीले भाग में सो रहती है– यह तप है गृहस्थाश्रम में। पति प्रयत्न करता है कि चाहे उसे दुःख ही होता हो, परन्तु पत्नी सुखी रहे। पत्नी यत्न करती है कि भले ही वह दुःख में रहे, किन्तु पति को आराम मिले– यह तप है। सन्तान होने पर माता–पिता दोनों प्रयत्न करते हैं कि सन्तान सुखी रहे, चाहे हम रहें या न रहें। यह भी तप है। जब भगवान् को वर लिया, तो सबसे पहले तप की यह भावना होनी चाहिए। यह पहली बात है, 'भर्गो देवस्य' की भावना। 'भर्गो देवस्य' के शब्द बोलो, तो निर्णय करो, मुझे दूसरों के कल्याण के लिए जीना है। अनुभव करो कि तुम भगवान के सामने खड़े हो। वह दूसरों का हित करता है, उन्हें आनन्द देता है। इसीलिए तुम भी दूसरों का हित करो। उन्हें आनन्द दो। ऐसा करने से गायत्री का जाप सफल होता है।

यदि मैं जाप करता हूँ और तप की भावना, दूसरों का हित करने की भावना मेरे अन्दर पैदा नहीं होती, यदि मैं तप

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

वह प्रभु महान सुपार तथा यज्ञशीलों के मित्र हैं

● डॉ. अशोक मित्र

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के सूक्त चार के सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि प्रभु सरूपक्रत्नु है। इस प्रभु की प्रार्थना करते हुए उपदेश किया गया है कि हम सदा यज्ञों को करने वाले बनें, जीवन भर सोम की रक्षा करते रहें, हम दान देने में आनन्द का अनुभव करें, सदा ज्ञानियों से ज्ञान प्राप्त करते रहें, किसी की निन्दा कदापि न करें, व्यर्थ के कामों में कभी अपना समय नष्ट न करें, सदा प्रभु की चर्चा में ही अपना समय लगावें क्योंकि वह प्रभु महान, सुपार तथा यज्ञशीलों के मित्र होते हैं। इन सब बातों का इस सूक्त के विभिन्न मन्त्रों के द्वारा चर्चा करते हुए बडे विस्तार से इस प्रकार वर्णन किया गया है। आओ इस सूक्त के माध्यम से हम यह सब ज्ञान प्राप्त करने का यत्न करें।

हम क्रोध, काम और असत्य कार्यों से बचें

प्रभु सरूपक्रत्नु है। ऐसे प्रभु का हम प्रतिदिन आराधन करें, जिससे हमारी वाणी मस्तिष्क मन तथा हाथ, सब सुन्दर बनें। हमारी वाणियाँ क्रोध रहित हों, मन में काम की सत्ता न आने पावे तथा हाथ लोभ सरीखे असत्य कार्यों में कभी न लगें। इस बात को ऋग्वेद के चतुर्थ मण्डल का यह मन्त्र बडे सुन्दर ढंग से इस प्रकार उपदेश कर रहा है:–

सुरुपक्रर्त्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे।
जुरूमसि द्यविद्यवि।। ऋग्वेद 1.4.1।।

सूक्त तीन में सरस्वती व ज्ञान के सागर का उल्लेख किया था तथा इस के साथ ही इस सूक्त की समाप्ति हुई थी। इस में बताया गया था कि हम सरस्वती के अधिष्ठाता बनकर ज्ञान रूपी सागर का रूप धारण करें। इस मन्त्र में इस तथ्य से ही आगे बढाने के लिए उपदेश करते हुए तीन बातों की ओर ध्यान दिलाते हुए कहा गया है कि:–

1. वह प्रभु ज्ञान स्वरूप व परम एश्वर्य से युक्त हैं:–

हम प्रभु स्तवन करते हुए अपने जीवन को गुणों से अलंकृत करें

प्रभु सर्व व्यापक है। उसकी महिमा को हम प्रत्येक लोक में देखें। हम सदा स्वयं को प्रभु में ही स्थित रखते हुए उस प्रभु का स्तवन करें, गुणगान करें। इस प्रकार हम अपने जीवन को गुणों रूपी अलंकारों से अलंकृत करते हैं। इस बात को ही मन्त्र में इस प्रकार कहा गया है:–

अतः परिज्मन्ना गहि दिवो वा
रोचनादधि।
समस्मिन्नारिन्जाते गिरः।।
ऋग्वेद 1.6.9।।

1. उस परमपिता परमात्मा का भक्त उस की आराधना करते हुए उससे प्रार्थना करता है कि हे चारों दिशाओं में सर्वव्यापक प्रभो! आप हमें प्राप्त होइए। मानव इस जन्म में प्रभु को पाने की अभिलाषा रखता है। इस अभिलाषा की पूर्ति ही इस मानव का लक्ष्य है। इसलिए यह पिता से प्रार्थना करता है की हे पिता! आप मुझे शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त होइए, मिलिए, दर्शन दीजिए। आप हमें पृथ्वी लोक से, प्राप्त हों, चाहे आप हमें द्युलोक से प्राप्त हों, अथवा अन्तरिक्ष लोक से जो केन्द्र व विद्युत् की दीप्ति वाला है, जो केन्द्र बिजली के प्रकाश से चमकने वाला है हमें प्राप्त हों।

पृथ्वी में जो अग्नि आदि देव हैं, जो आपके तेज को और भी तेजस्वी करने वाले देव हैं, मैं उन सब देवों का चिन्तन करता हुआ, स्मरण करता हुआ, उन सब देवों में आपसे स्थापित किए गए देवता का दर्शन करूँ, उस देवता का दर्शन करूँ, जिसे आपने अपने में स्थान दे दिया है। इतना ही नहीं मैं अंतरिक्ष लोक में भी, अंतरिक्ष के देवों के माध्यम से सदा आप ही की महिमा को देखूँ, आप ही के दर्शन करूँ। द्युलोक को प्रकाशित लोक कहते हैं, इस लोक में भी मैं सदा आप ही के प्रकाश को पाऊँ, आप ही के प्रकाश को देखूँ। आप ही का प्रकाश मुझे मिले। इस प्रकार तीनों लोकों में सर्वत्र आप ही के प्रकाश के मुझे दर्शन हों, आप ही का प्रकाश मुझे दिखाई दे ताकि आप ही के प्रकाश की ज्योति को प्राप्त करूँ।

हे प्रभु! मैं सर्वत्र आप ही की महिमा के दर्शन करूँ। पृथिवी लोक हो चाहे अन्तरिक्ष लोक हो अथवा द्युलोक हो, जहाँ भी जाऊँ सर्वत्र आप ही आप अपनी महिमा के द्वारा दिखाई दें, आप ही की महिमा सर्वत्र कार्यरत, सर्वत्र गतिमान, सर्वत्र कर्मशील दिखाई दे तथा उस महिमा को देख कर, उस महिमा के दर्शन कर मैं अपने आप को उज्ज्वल करूँ, धन्य करूँ।

2. इस प्रकार जो लोग सब स्थानों पर उस पिता की महिमा को देखते हैं, इसे प्रभु स्मरण करने वाले लोग, प्रभु स्तवन करने वाले लोग, प्रभु का कीर्तन करने वाले लोग, प्रभु की निकटता पाने वाले प्रभु भक्त लोग इस परमात्मा में ही अपने जीवन को सुभाषित करते हैं, सजा लेते हैं। इस प्रकार इस प्रभु की स्तुति करते हुए, इस प्रभु की आराधना करते हुए, इस प्रभु का कीर्तन करते हुए, इस प्रभु की समीपता पाने का यत्न करते हुए, यह प्रभु भक्त अपने जीवन को प्रभु के अनुरूप बनाने का यत्न करते हैं। जो गुण प्रभु में हैं, वैसे गुण स्वयं में धारण करने का निर्णय करते हैं। यह लोग स्वयं को भी उस पिता के समान बनाने का निर्णय लेकर वैसा ही बनने का प्रयास करते हैं। जब यह लोग ऐसा यत्न, प्रयास करते हैं तो उनके जीवन में सुन्दरता निरन्तर बढ़ने लगती है तथा निरन्तर सुन्दर तथा और सुन्दर बनते चले जाते हैं।

हम लोग उस ज्ञान स्वरूप तथा परमैश्वर्य वाले प्रभु की आराधना, उस पवित्र पावन प्रभु का स्मरण करते हुए इस प्रकार कहते हैं कि हम उस ज्ञान के द्वारा जो ज्ञान विगत सूक्त के मन्त्रों के माध्यम से हमने प्रभु से प्राप्त किया था उत्तम रूप का निर्माण करने वाले परमात्मा को हम प्रतिदिन पुकारते हैं। परम पिता स्वयं ज्ञान स्वरूप है। वह प्रभु ज्ञान स्वरूप, ज्ञान का भण्डारी होने के कारण हमें भी सदा ज्ञान बाँटता रहता है किन्तु वह ज्ञान देता उसे ही है, जो उसके ज्ञान को पाने के लिए यत्न करता है। जो उस प्रभु से ज्ञान की भिक्षा माँगता है। जो किसी वस्तु की कामना ही नहीं करता, जो किसी वस्तु को पाने का यत्न ही नहीं करता, जो किसी वस्तु को पाने के लिए स्वयं को योग्य ही नहीं बनाता, उसे प्रभु कुछ देता भी तो नहीं है। इस लिए मन्त्र कहता है कि हम प्रतिदिन उस प्रभु की आराधना करते हैं। मन्त्र स्पष्ट कर रहा है कि आवश्यकता पड़ने पर प्रभु के चरणों में जा कर बैठ जाना ताकि जरूरत पूर्ण होने पर प्रभु को याद भी न करना, ऐसे लोगों को प्रभु का आशीर्वाद मिलने वाला नहीं है। यदि हमने उस पिता से कुछ पाना है तो नियमित रूप से उस के चरणों में बैठना होगा, नियमित रूप से उसे याद करना होगा, नियमित रूप से उसकी प्रार्थना, उसकी आराधना करनी होगी। तब ही वह प्रभु हमारी सुनेगा अन्यथा नहीं। इसलिए हम प्रतिदिन उस प्रभु के समीप बैठकर अराधना करें।

अब प्रश्न उठता है के हम प्रतिदिन प्रभु का आराधन क्यों करें? क्योंकि वह प्रभु हमारी वाणी को सूनृत वचनों से, ऐसे वचनों से जो उत्तम हों, मीठे हों, सब को आनन्द देने वाले हों, हर्षित करने वाले हों, ऐसे सुन्दर वचनों को उच्चारण करने वाली हमारी वाणी को बना कर सुरूप बना देते हैं, उत्तम रूप से युक्त करते हैं। इतना ही नहीं वह प्रभु हमारे मस्तिष्क को भी, मस्तिष्क के साथ ही साथ हमारे मन को भी सुमतियों से, उत्तम मोतियों से भर देते हैं, परिपूर्ण कर देते हैं, सुविचार, उत्तम विचार से लबालब कर देते हैं। इस प्रकार हमारे मस्तिष्क व मन को उत्तम मति वाला बनाते हैं तथा उत्तम विचारों के चिन्तन करने वाला बना कर वास्तव में इसे सुरूप करते हैं तथा जो प्रभु हमारे हाथों से भी सदा उत्तम कार्य कराते हैं, उत्तम कार्यों की ओर प्रेरित करते हैं। उत्तम कार्य कौन से होते हैं, जिन्हें हाथों से करने के लिए प्रभु प्रेरित करते हैं। उत्तम कार्य यज्ञों को कहा गया है, जिससे अपने साथ ही साथ अन्यों को भी कल्याण होता हैं, वह प्रभु हमारे हाथों को ऐसे कार्यों को करने वाले बनाते हैं तथा हाथों से इस प्रकार के उत्तम कार्य कराते हुए इन्हें भी सुन्दर अर्थात् सुरूपता प्रदान करते हैं।

2. इस प्रकार के कार्य करने के कारण हम उस प्रभु को सुरुपक्रत्नु कहते हैं। ऐसे सुरुपक्रत्नु प्रभु को हम रक्षा के लिए पुकारते हैं। जब हम संकट में होते हैं तो हम अपने सम्बन्धी, अपने मित्र व अपने रक्षक को पुकारते हैं ताकि संकट के समय वह हमारा सहायक बनकर, हमारा रक्षक बन कर हमारा सहयोग करे, हमारी रक्षा करे। पुकारते समय हम देखते हैं कि हमारी रक्षा का सामर्थ्य किस में है, उसे ही हम पुकारते हैं, जिसमें ऐसा सामर्थ्य है ही नहीं, उसे बुलाने का कुछ लाभ नहीं होता। हमारा वह प्रभु सुरुपक्रत्नु है, इस कारण ही हम उस प्रभु को पुकारते हैं। वह प्रभु हमारी रक्षा के लिए जो आवश्यक गुण हैं, उन सब का मालिक है, हम इसलिए उसे पुकारते हैं, ताकि वह हमारी रक्षा कर सके।

मानव अपने स्वार्थ के लिए तथा अनेक बार दूसरों की कमियों के कारण दूसरों की गलतियों के कारण क्रोध कर बैठता है। इस अवसर पर वह ऐसी कड़वी वाणी बोल जाता है, जिससे सुनने वाले

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

ऋग्वैदिक भारतीय समाज – ऋग्वेद के आइने में

● सूर्य देव चौधरी

वेदों की उत्पत्ति के बारे में वैदिक एवं पौराणिक दोनों भारतीय मान्यताओं में समानता यह है कि वेद सृष्टि के आदि में ईश्वरीय ज्ञान का प्रतिफल है। इन दोनों मान्यताओं में अन्तर यह है कि वैदिक मान्यता के अनुसार चारों वेद चार ऋषियों के हृदय में ईश्वरीय प्रेरणा से हुए, जबकि पौराणिक मान्यता के अनुसार चारों वेद ब्रह्मा के चारों मुख से एक ही समय निःसृत हुए। पाश्चात्य मान्यता इससे भिन्न है। इसके अनुसार वेद कुछ हजार वर्ष पहले की रचना है ओर उसमें भी ऋग्वेद को सबसे प्राचीन और शेष तीन वेदों को बाद की रचना मानी जाती है। हालाँकि पश्चिमी विद्वान और उनके अनुगामी भारतीय विद्वान अभी तक वेदों का निश्चित काल–निर्धारण करने में असफल रहे हैं।

पाश्चात्य विद्वान और उनके अनुगामी भारतीय विद्वान ऋग्वेद को प्राचीनतम मानकर उसके आधार पर अपनी पूर्वाग्रह ग्रसित बुद्धि से तत्कालीन समाज की जो रूप–रेखा प्रस्तुत करते हैं, उसके अनुसार आर्य बाहर से आक्रान्ता के रूप में भारत आए। वे कबीलाई अवस्था में रहते थे और भोजन की खोज में इधर–उधर घूमते रहते थे। इसी क्रम में व परस्पर तथा दूसरों से लड़ाई–झगड़ा भी करते थे। उनका कहीं स्थायी निवास नहीं था क्योंकि उन्हें गृह–निर्माण की विद्या नहीं आती थी और न ही उन्हें कृषि–कर्म का ज्ञान था। उस समय न तो समाज का वर्गीकरण हुआ था और न ही विवाह–प्रथा का प्रचलन। कहने का तात्पर्य है कि ऋग्वैदिक समाज अज्ञानी, असभ्य, जंगली, अविकसित, पशुचारक और कबीलाई अवस्था में था।

कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है और दर्पण में प्रतिबिम्ब वैसी ही दीखती है जैसी कि वस्तु रहती है। ऋग्वेद आर्यों का साहित्य है। अतः ऋग्वेद के आधार पर आर्यों के ज्ञान–विज्ञान और रहन–सहन की सच्ची प्रतिबिम्ब देखी जा सकती है। हालाँकि वेद में किसी लौकिक इतिहास का वर्णन नहीं है, फिर भी थोड़ी देर के लिए मान लेते हैं। ऋग्वेद में वर्त्तमान ज्ञान का स्तर यदि निम्न कोटि का होगा या विज्ञान के विरुद्ध होगा तो हमें यह मान लेने में कोई आपत्ति न होगी कि तत्कालीन समाज अविकसित अवस्था में था। लेकिन यदि उसमें वर्त्तमान ज्ञान का स्तर उच्च कोटि का और आधुनिक विज्ञान से समर्थित होगा, तो पूर्वाग्रह को छोड़कर इतिहासकारों को मान लेना चाहिए कि ऋग्वैदिक भारतीय समाज अविकसित अवस्था में न होकर उच्चकोटि का जीवन व्यतीत करते थे आधुनिक जीवन से उनकी जीवन किसी भी स्थिति में निम्न स्तर का नहीं था। सिर्फ मौखिक विवेचन से नहीं, बल्कि ऋग्वेद के उदाहरणों से देखें कि ऋग्वैदिक भारतीय समाज के बारे में सच्चाई क्या है?

1. गृह–निर्माण:– जो इतिहासकार यह कहते हैं कि ऋग्वैदिक समाज कबीलाई अवस्था में था और उसको गृह–निर्माण की जानकारी नहीं थी, उसको गलत साबित करने के लिए निम्नलिखित दो मंत्र पर्याप्त हैं–

(क) राजानावनभिदुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे। सहस्रस्थूो आसाते।। ऋ. (2/41/5)

अर्थात् हे द्रोहकर्मरहित जनो! तुम उन लोगों को जानो जो निश्चल, श्रेष्ठ हजार खम्भों से बने हुए सभा–भवन में बैठते हैं।

(ख) शतमश्मन्मयीनाम् पुरामिन्दो व्यास्पत्। दिवोदासाय दाशुषे।। ऋ. (4/30/20)

अर्थात् जो राजा पत्थर से निर्मित सैंकड़ों नगरों को विशेष प्रकार से काटे, वही विजयी हो सकता है।

जब हजार खम्भों पर आधारित और पत्थर से निर्मित भवन का स्पष्ट वर्णन ऋग्वेद में वर्त्तमान है तो इतिहासकारों की यह धारणा स्वतः ही निर्मूल हो जाती है कि तत्कालीन समाज को गृह–निर्माण का ज्ञान नहीं था। अपितु ऋग्वैदिक आर्यों को गृह–निर्माण का सम्यक् ज्ञान था।

2. विवाह–प्रथा:– कुछ इतिहासकारों ने यह भी गलत धारणा पाल रखी हैं कि प्रारम्भिक आर्यों में विवाह–प्रथा का प्रचलन नहीं था, लेकिन स्त्री–पुरुष के शारीरिक सम्बन्ध से जनसंख्या की वृद्धि होती रही। इतिहासकारों की यह धारणा भी निम्नलिखित मंत्र से खंडित हो जाती है :–

'वधूरियं पतिमिच्छन्त्येति य इ वहाते महिषीमिषिराम्। ऋ. (5/37/3)

अर्थात् जो पुरुष पति की कामना करने वाली वधू से विवाह करता है, वह उसे अपनी रानी बनाता है।

इसके अतिरिक्त ऋग्वेद प्रथम मंडल के 125वाँ एवं 179वाँ सूक्त का देवता अर्थात् वर्णनीय विषय ही 'दम्पति' है, जिसका शाब्दिक अर्थ विवाहित पति–पत्नी होता है। इन दोनों सूक्तों में विस्तार पूर्वक विवाह सम सम्बद्ध वर्णन है। इसके लिए ऋग्वेद (10–27–12), (10–32–3) तथा (10–85–36) भी द्रष्टव्य हैं। अतः स्पष्ट है कि ऋग्वैदिक समाज में विधि–पूर्वक विवाह की प्रथा प्रचलित थी।

3. कृषि–कार्य:– कुछ इतिहासकारों का मत है कि ऋग्वैदिक समाज कृषि–कार्य से अनभिज्ञ था और इसकी पुष्टि में तर्क देते हैं कि ऋग्वेद में अन्न शब्द नहीं पाया जाता है। लेकिन उनकी दृष्टि ऋग्वेद (6/67/8) पर नहीं पड़ती है जहाँ घी और अन्न दोनों शब्द स्पष्टतः पड़े हुए हैं और अन्यत्र 'नमसा' या 'नम' शब्द के धात्वर्थ से भी अन्न शब्द का ग्रहण होता है। अन्न के लिए सिंचाई की जरूरत होती है। सिंचाई के लिए ऋग्वेद का निम्नांकित मंत्र ध्यातव्य है–

'सिञ्चति नमसावतमुच्चा चक्रं परिज्मानम्। नीचीवारमक्षितम्।। (ऋ.8/72/10)

अर्थात् 'जिसके ऊपर चक्र लगा हो और चारों ओर भूमि हो तथा नीचे पानी के द्वार हों, ऐसे अक्षय भंडार रूप कूप को अन्न के लिए सिंचाई के काम में लाते हैं।' इसी तरह का वर्णन ऋग्वेद 1/116/9 में भी आता है तथा ऋग्वेद 10/34/13 में कृषि करने का आदेश है। जब ऋग्वेद में इस तरह की सिंचाई के वैज्ञानिक साधन एवं कृषि–कार्य का स्पष्ट उल्लेख है तब इतिहासकारों की इस धारणा को सत्य नहीं माना जा सकता है कि ऋग्वैदिक समाज को कृषि–कार्य का ज्ञान नहीं था।

4. समाज का वर्गीकरण:– कुछ इतिहासकार ऋग्वैदिक समाज को कबीलाई अवस्था का मानकर यह कहते हैं कि वैसी स्थिति में समाज का वर्गीकरण सम्भव नहीं था। लेकिन ऋग्वेद 10/90/12 में समाज के वर्गीकरण अथवा वर्ण–व्यवस्था का स्पष्ट वर्णन है।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहु राजन्यः कृतः। उरु तदस्य यत् वैश्यः पद्भ्याम् शूद्रो अजायत।।

अतः ऋग्वैदिक समाज के वर्गीकृत न होने की मान्यता भी गलत साबित होती है। उपरोक्त मंत्र से यह साबित हो जाता है कि ऋग्वैदिक समाज सुन्दर एवं सभ्यक् रुपेण चार वर्णों में वर्गीकृत था।

5. राजनीतिक स्थिति:– ऋग्वेद 3/38/6 में कहा गया है:–

त्रीणि राजाना विदथे पुरुणी परि विश्वानि भूषथः सदांसि।
अपश्यमा मनसा जगन्वान् व्रते गंधर्वा अपि वायुकेशान्।।

अर्थात् प्रजा के हित में विविध प्रकार के सम्पूर्ण सुखों की व्याख्या एवं व्यवस्था करने के लिए तीन सभा की स्थापना करें, जिसमें व्रतपालक, राजनीति के ज्ञाता, विज्ञानवान और सूर्य के समान अपने ज्ञान से प्रकाशित जन हों। यदि आज के संदर्भ में इसकी तुलना करें तो लोक सभा, राज्य सभा एवं न्याय सभा के रूप में समझा जा सकता है। ऋग्वेद के अन्य सूक्तों एवं मंत्रों में भी इस तरह के राजनीति एवं प्रशासन व्यवस्था का वर्णन मिलता है। इस प्रकार तीन सभाओं द्वारा शासित समाज को पशुचारक या कबीलाई अवस्था का बतलाना सत्य को झूठलाना है।

6. धार्मिक स्थिति:– ऋग्वैदिक समाज की धार्मिक स्थिति प्रायः सर्वविदित है। फिर भी संक्षिप्त जानकारी दे देना आवश्यक समझता हूँ। यज्ञ ऋग्वैदिक समाज का मुख्य धार्मिक कर्त्तव्य था। यज्ञ में धर्म के साथ विज्ञान का अनूठा समन्वय है क्योंकि यज्ञ वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित वायुमंडल के शोधनार्थ धार्मिक कार्य था और आज भी है। ऋग्वैदिक समाज बहुदेवतावादी न होकर एक ईश्वर को मानता था जैसा कि ऋग्वेद (1/164/46) में कहा गया है– **एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'** अर्थात् एक ही ईश्वर को ज्ञानी जन अनेक नामों से पुकारते हैं।

7. वैज्ञानिक स्थिति:– यदि ऋग्वेद के अध्ययन के आधार पर तत्कालीन वैमानिक ज्ञान की चर्चा की जाय तो अलग से पुस्तकें लिखी जा सकती हैं या फिर विस्तृत निबंध लिखे जा सकते हैं। लेकिन विस्तार में न जाकर कुछेक उदाहरणों से ही इतिहासकारों की मिथ्या धारणाओं का खंडन करना यहाँ पर्याप्त होगा। एक उदाहरण देखिए:

त्रयः पवयो मधुवाहने रथे सोमस्य वेनामनु विश्वे इद्विदुः।

त्रयः स्कंभास स्कभितासः आरभे त्रिर्नक्तं याथस्त्रिर्वश्विना दिवा।। ऋ.1/34/2

अर्थात् 'हे शीघ्रगामी शक्तियों! सुखपूर्वक ले जानेवाले यान में तीन वज्रतुल्य कलाचक्र हों तथा वह तीन स्तम्भों से स्तम्भित हो। ऐसे विमान को चन्द्रमा की यात्रा आरम्भ करने के क्रम में सभी निश्चित रूप से जाने कि तीन दिन में उसे वहाँ ले जाया जा सकता है।'

इसके अतिरिक्त ऋ. (3/14/1) तथा (3/24/13) में विद्युत–रथ यानी बिजली से चालित यान का वर्णन है। विमान एवं जलयान के लिए ऋग्वेद (4/36/1), (1/88/1), (1/116/3) तथा (1/116/4) मंत्र भी द्रष्टव्य हैं। ऋग्वेद (1/116/15) में टूटी हुई टांगों के बदले लोहे के कृतिम टांग (पैर) प्रत्यारोपित करने का वर्णन है तो ऋ. (1/116/16) में नेत्र की शल्य–चिकित्सा तथा ऋ. (1/117/13) में वृद्ध को युवा करने का वर्णन मिलता है। इस तरह अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं, लेकिन लेख का कलेवर हमें अनुमति नहीं देता कि हम उसका यहाँ वर्णन करें।

ऋग्वेद के उपरोक्त उदाहरणों के आलोक में इतिहासकारों की सभी मिथ्या धारणाएँ खंडित हो जाती हैं। अतः इतिहासकारों को तत्संबन्धी अपने मिथ्या पूर्वाग्रह से मुक्त होकर सत्यपक्ष का अवलम्बन करना चाहिए। और सत्य यह है कि ऋग्वैदिक आर्य पूर्णतः शिक्षित, सुसभ्य, ज्ञान–विज्ञान के ज्ञाता, गृह–निर्माण में दक्ष, कृषि–कार्य के जानकार, विवाहित जीवन जीने–वाले, वर्गीकृत समाज में सुचारू राजनीति के संचालक तथा जीव के सम्पूर्ण तत्त्वों से अभिज्ञ धार्मिक जन थे। तभी तो उन्हें 'आर्य' अर्थात् श्रेष्ठ कहा गया है।

झारखण्ड राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
स्वामी श्रद्धानन्द पथ, रांची–1
मो. 09470587322

अज़ब जादूगर ने बजायी गज़ब वेद–वीणा

● देव नारायण भारद्वाज

"वीणा" एक अद्‌भुत शब्द बोलने में मधुर सुनने में मधुर; एक वाद्य यन्त्र। सरस माँ सरस्वती का वाद्य यन्त्र। सभी प्रकार की दान दात्री माँ सरस्वती का वाद्य–यन्त्र। ''वीणा वादिनी वर दे'' कवि निराला जी इन्हीं शब्दों में मँ सरस्वती की वन्दना करके अमर हो गए। मूर्ति या चित्र की सरस्वती नहीं छन्दों एवं स्वरों की सरस्वती सब को जो सभी कुछ देती है, यदि उसका अंश भी प्राप्त कर लें तो अमर होने में कोई कमी शेष नहीं रहती है। जब सधी हुई अंगुलियाँ वीणा के तारों पर थिरकने लगती हैं, तो इसमें से उपजते मधुर स्वर वातावरण को अपनी स्वर लहरियों से अलंकृत करने लगते हैं। एक ऐसी वीणा कीर्तिकर्मी अवतंस वंश में पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित चली आ रही थी। माता–पिता से पूर्व, पितामही से पूर्व प्रपितामह–प्रपितामही से पूर्व कुलवासी यथावसर वीणा को बजाकर न केवल आनन्द मग्न होते थे प्रत्युत इसके स्वरों से अपने कर्त्तव्य कर्मों में भी नव स्फूर्ति का संचार करते रहते थे। पुरुषार्थ के द्वारा सफलता के उच्च से उच्चतर सोपान दर सोपान चढ़कर आगे बढ़ते रहते थे। निकट दूर से पड़ोसी इस परिवार से प्रेरणा ग्रहण करते रहते थे।

वीणा को सँभाले रखना भी एक तपस्या है। इसके दो अक्षरों पर लगी मात्राएँ भी इधर से उधर हो जाएँ तो वीणा बन जाती है। वाणी, वाणी की मात्रा 'ई' यदि खिसक जाए तो बचा रहता है केवल वाण। यह वाण बहुत भंयकर होता है। धनुष के वाण से भी भयंकर। इस वाण का व्रण भर जाता है, पर वाणी के वाण का घाव इतना गहरा होता है कि भरते भरते भी हरा हो जाता है। ऊपर नीचे की दो पंक्तियों के मध्य रहने वाली जिह्वा पर दया दिखाते हुए किसी ने दाँतों से पूछ लिया– यह कोमल सरस जिह्वा तुम पत्थर समान दाँतों से बहुत डरती सिकुड़ती रहती होगी; वज्र दन्त बोल पड़े नहीं नहीं डरते हम सभी हैं। यह सरस कोमल जिह्वा जब कोई कठोर कटुवचन बोल देती है, तो सुनने वाला क्रोध में भर कर कह उठता है। चुप हो जाओ नहीं तो अभी बत्तीसों बाहर निकल पड़ेंगे। शासकों की भोग–विलासिता वेद विद्या के प्रति उदासीनता के वशीभूत पारस्परिक ईर्ष्या–द्वेष के कंटक उगने लगे। उनके साथ चल–चित्र एवं दूरदर्शन जैसे वाद्य घर–घर बजने लगे। घर वाले अन्दर लड़ते तो बाहर वाले उनके शोर को आकाशवाणी की भाँति सुनते और लड़ते झगड़ते व शोर करते लोग घर द्वार पर आ जाते तो बाहर वाले उनको दूरदर्शन की भाँति देखते।

'वीणा' को अब कौन बजाता। चौबीस घंटे दूरदर्शन की लीलाओं से आने वाले अपसंस्कृति के वासनात्मक नग्न नृत्य व शब्द जब सामने प्रस्तुत हो रहे हों तो प्रवीणा वीणा का सीना चूर–चूर हो जाता फलतः परिवार में ज्येष्ठ–कनिष्ठ पिता–पुत्र, माता–बेटी, सास–ससुर तथा बालवृद्ध सभी की मर्यादाएँ भंग होने लगती। वीणा मौन होकर एक ओर पड़ गई। वीणा के तार की झंकार क्या बन्द हुई पारिवारिक प्यार सत्कार व मृदु व्यवहार सभी कुछ मन्द हो गया। दूरदर्शन आदि उपकरण संचालन के लिए विद्युत चाहिए किन्तु इनसे निर्देशित कलुषित गृह कलह व वाद विवाद के लिए विद्युत की कोई आवश्यकता नहीं। घर में जब बड़े लड़ रहे हों कोई बच्चा कभी–कभार वीणा वादन कर बैठे तो घरवालों को उसके स्वर कर्कश लगने लगते। लड़ाई के रस–रंग को भंग करने वाली वीणा को एक दिन क्रोध में आकर बाहर घूरे पर फेंक दिया गया। ठोकरें खाते हुए कहाँ–कहाँ नहीं मारी–मारी फिरती रही यह वीणा। समय कब ठहरता है वह तो सिर पर पैर रख कर दौड़ता ही रहता है। परमेश प्रभु के अनूठे मीठे–मीठे गीत गुनगुनाने वाले फकीर ने घूरे पर दबी पड़ी उस वीणा को एक दिन उठा लिया। बोल पड़ा कितनी उत्तम वीणा, कितनी गन्दी। उसने वीणा को अपने कर कमल लगाकर मल–मलकर धो पोंछ कर स्वच्छ व शुद्ध कर लिया। अब उसके अधरों पर गुनगुनाने वाले गीत वीणा के तारों पर नर्तन कर रही अंगुलियों के साथ संगत होकर नूतन ही तरंगें बिखेरने लगे, जो सुनते वही दंग रह जाते।

वीणा बजाते प्रभु गीत गाते, रोते को हँसाते, सोते को जागते वह फकीर एक प्रभात को उसी घर के सामने से निकला जिसके परिवार ने वीणा को बाहर घूरे पर फेंक दिया था। दूरदर्शनीय अशोभनीय दृश्यों से प्रभावित परिवार के भवभोगी लोग जो लड़–झगड़कर देर रात्रि में सोते थे। वे प्रभात वेला में भुवन भास्कर के उदय होने पर भी नहीं जागते। जागती तो बस एक वृद्धा माता ही जागती। वृद्धा माता ने फकीर को रोकर कहा बाबा वीणा तो बहुत अच्छी है तुम्हारी। बहुत अच्छी है इसकी स्वर तंत्री। बाबा सुनाओ अपना गीत वीणा का संगीत। वीणा संगीत तो कानों में रस घोल देता है। फकीर बोला, माता! बोलना तो मात्र मुख से संभव है। वीणा के मुख कहाँ जो यह बोले। और हाँ मुख–वचन का समर्थन करने लगती हैं उसकी अंगुलियां और वीणा के तारों पर नर्तन करने लगती है। मौन तार मुखर हो उठते हैं स्वर फूट पड़ते हैं। मनुष्य संसार में जो कुछ कर्म करता है इन्हीं अंगुलियों से करता है। ''बाँहों का यश–बल करतल कर पृष्ठ पर आधारित है। करतल कर पृष्ठ इन्हीं अंगुलियों से संचालित होते हैं।'' सामने वाले व्यक्ति की ओर कोई एक अंगुली उठाता है तो उसकी तीन अंगुलियाँ पृथक–पृथक छोटी बड़ी दिखाई देती है पर मुट्ठी बन्द करते ही सब बराबर स्तर पर आ जाती हैं। कहा भी गया है कि बन्द मुट्ठी लाख की, खुल गयी तो खाक की। ऐश्वर्य हस्तगत हो मुट्ठी में होता ही है, शत्रु पर प्रहार भी मुष्टिका अर्थात् घूसा से ही करना पड़ता है। यही मनुष्य के हाथ की सफाई है हाथ की कमायी है जो उसने अपनी अंगुलियों से पाई है।

वीणा वादक बाबा! यह वृद्धा सब जानती है पर क्या करे, सन्तान ही नहीं मानती है। तुम्हारी वीणा ही अब इन्हें नग से नगीना बना सकती है। यह वृद्धा माता कोई साधारण माता नहीं विश्ववारा श्रुति संस्कृति समलंकृता, आर्यावर्ता भारतमाता ही तो है। परिवार वंश कोई साधारण नहीं मनु, मान्धाता, शान्तनु–भीष्म प्रभृति से समृद्ध कुरु कुल है। कुरु कुल का अर्थ है कौरव कुल न लगा लेना, कुरू अर्थात् कृती वंश समझ लेना। वीणा भी कोई साधारण वीणा नहीं, करषन उर चन्दन अमृता यशोदानन्दन, ईश्वरीय कृति ऋषि–रंजन दयानन्द सरस्वती है। लेखक! शीर्षक में तो तुमने जादूगर कहा है, किन्तु तुम इन्हें फकीर कहते आ रहे हो। हाँ आपने ठीक पकड़ा। पर फकीर भी तो जादूगर हो सकता है। जादूगर उन्हें मैं नहीं, काशी वासियों ने कहा, वही मैंने भी यहाँ दोहरा दिया। बचपन में यह काशी पढने के लिए जाना चाहते थे। पिता ने मोहवश नहीं जाने दिया। उल्टे विवाह की तैयारी कर दी। विवाह महोत्सव के मोद–प्रमोद–उल्लास को ठुकरा कर निकल पड़े घर से। वे मूलशंकर से शुद्ध चैतन्य, फिर दयानन्द सरस्वती बनकर मथुरावासी गुरु विरजानन्द से दीक्षा लेकर अब काशी जी पढ़ने के लिए नहीं पढ़ाने के लिए पहुँचे थे। सर्वत्र शोर मच गया। काशी में एक जादूगर आया है। रात की बात नहीं दिन में भी उसके दोनों ओर मशालें जलती हैं। जादूगर नास्तिक है। नास्तिक भी ऐसा जो वेदशास्त्र का ज्ञाता है। विशाल देहयष्ठि अधिकाधिक ऊँचाई, आकर्षक व्यक्तित्व उद्‌भट् विद्वान है। काशी के बड़े–बड़े पंडित उससे शास्त्रार्थ करने जाते हैं और उसके तेज से पराभूत हो सभी लौट आते हैं। माताएँ बच्चों को घर से निकलने नहीं देती हैं। उन्हें डर है बच्चे कहीं उसके फेर में न पड़ जाएँ। पुलिस अधिकारियों की पत्नियाँ भी अपने बच्चों को बचाकर रखती हैं। ऐसी ही सावधानी उस समय दस वर्षीय बालक मुन्शीराम के लिए रखी गई थी, जो वहाँ पुलिस अधिकारी के पुत्र थे।

वीणा वाला फकीर अब परिपक्व जादूगर वेद–वीणा वाला बन गया था। दसियों वर्ष बाद वे ही दयानन्द सरस्वती यत्र–तत्र सर्वत्र शास्त्रार्थ विजय करते हुए बरेली पहुँच गए। बालक मुन्शीराम अब युवा हो गए थे। पिता बरेली पहुँच गए। बालक मुन्शीराम अब युवा हो गए थे। पिता बरेली में कोतवाल थे। मुन्शीराम संयोगवशात् दुर्गुण–दुर्व्यसन की खान बन चुके थे। धार्मिक क्षेत्र की दुर्व्यवस्था, कुप्रथा– व्यथा से तंग होकर नास्तिक बन चुके थे। संस्कृत शास्त्रज्ञों की कथनी करनी के अन्तर ने मुंशीराम को धर्म कर्म पूजा मर्म के प्रति आस्थाहीन बना दिया था। नगर कोतवाल पिता नानक चन्द का शासन–अनुशासन सब पर चलता था, पर मुंशीराम पर नहीं। जादूगर फकीर दयानन्द की सभा–व्यवस्था हेतु पहुँचा दिया। दृश्य दर्शन करते ही जादूगर का जादू मुन्शीराम पर चल गया। उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देखते ही श्रद्धा जाग उठी। सभा में पादरी स्काट व अन्य अंग्रेजों को बैठा देख श्रद्धा प्रसिद्ध हो गई। उन्होंने जादूगर से प्रश्नोत्तर किए स्वयं निरुतर रहे, जादूगर की चाल–ढाल व उनके भाल विशाल को देखा। पौराणिक श्रोता कह उठते–देखो! यह तो कोई अवतार हैं। बात आई गई हो गई। मुन्शीराम सफल मुख्तार बने। दुर्व्यसन–दोष भी साथ ढलते चले, पर अन्तःकरण में जादूगर दयानन्द के वाक्य भी पलते चले। मुख्तार मुन्शीराम वकालत पढ़ने लाहौर जा रहे थे। वकीलों द्वारा उनका विदाई समारोह मनाया गया। डटकर मदिरा पान हुआ। किसी साथी ने एक युवती को पकड़ लिया। उसे बचाने दौड़ पड़े मुन्शीराम। अन्दर की आँखों ने अन्तर पट खोल दिए–अरे यह तो वही

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

द्वे वचसी

''महर्षि दयानन्द सरस्वती की प्रामाणिक जन्मतिथि'' से साभार

● ज्वलन्तकुमार शास्त्री

"महर्षि दयानन्द सरस्वती की प्रामाणिक जन्मतिथि" शीर्षक से मेरी पुस्तक का (परिमार्जित, परिवर्द्धित तथा 6 परिशिष्टों सहित) द्वितीय संस्करण प्रकाश में आ रहा है। पूर्व प्रकाशित प्रथम संस्करण (1990ई.) की पृष्ठभूमि तथा क्रिया–प्रतिक्रिया से पाठकों को परिचित कराने के लिए संक्षेप में कुछ लिख रहा हूँ। 'परोपकारी' के 'डॉ. भवानीलाल भारतीय अभिनन्दन ग्रन्थ' के सम्पादन करते समय तक मुझे ऋषि दयानन्द की जन्मतिथि विषयक भारतीय जी द्वारा लिखित 'नवजागरण के पुरोधा' में दी गई सामग्री तक ही जानकारी थी, अतः उस अभिनन्दन ग्रन्थ में भारतीय जी के ग्रन्थों की समीक्षा लिखते समय भाद्रपद शुक्ला 9 नवमी 1881 विक्रमी के मत को ही मैंने उपयुक्त समझा था। बाद में आचार्य विश्वश्रवाःजी ने मेरा ध्यान सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा के निर्णय की ओर आकृष्ट करते हुए कहा कि इस दिशा में तुम यदि विशेष अनुसन्धान करोगे तो निश्चय ही धर्मार्य सभा के निर्णय (फाल्गुन कृष्ण दशमी शनिवार 1881 विक्रमी तदनुसार 12 फरवरी 1825ई.) से सहमत हो जाओगे। यथासमय नवम्बर 1988ई. में वाराणसी में मुझे दो सप्ताह तक रहने का अवसर मिला और उस काल में आर्य समाज लल्लापुरा वाराणसी के पुस्तकालय से प्रो. भीमसेन शास्त्रीजी की लिखी पुस्तकें और लेख (जो गोविन्दराम हासानन्द देहली से छपे थे) पढ़ने को मिले। मेरी अनुसन्धित्सा जाग उठी और मैंने उन लेखों तथा पुस्तकों में उल्लिखित अनेक पुस्तकें पत्र लिखकर डॉ. भारतीयजी के व्यक्तिगत पुस्तकालय में मँगाई। अन्य स्थानों से भी उपयुक्त सामग्री जुटाकर फुलस्केप साइज के 70 सत्तर पृष्ठों में शोध निबन्ध तैयार करके 'वेदवाणी' के सम्पादक माननीय पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी के पास भेज दिया, (जो 'वेदवाणी' में छपने पर 37 पृष्ठों में आया)। मेरे अनुसन्धान से सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा के निर्णय की पुष्टि हुई। पहले 4–4 पृष्ठ करके वेदवाणी के प्रतयेक अंक में छपवाने का विचार था। किन्तु मीमांकजी की इच्छानुसार और मेरी भी सहमति से 'वेदवाणी' के 'दयानन्द विशेषांक' (7)' जनवरी 1990 ई. में पृष्ठ 1 से 45 तक छपा। 'वेदवाणी' में छपे पृष्ठों को उसी समय 500 प्रतियाँ अतिरिक्त छपवाकर वेदवाणी कार्यालय से प्राप्त कर ली थीं। इन्हीं पृष्ठों को अलग से कवर पृष्ठ लगाकर 5 पाँच रुपए मूल्य के साथ पुस्तक रूप दे दिया। वेदवाणी के अंक में छपने से पूर्व मैंने अपने इस विस्तृत शोध निबन्ध का सारांश 5 पृष्ठों में लिखकर आर्य जगत्, आर्य सन्देश, सार्वदेशिक आदि पत्रों में छपवाया। 'आर्य जगत्' के ऋषि बोधाङ्क 1889 ई. के अंक में पं. क्षितीशजी ने अपनी टिप्पणी के साथ छापा, जिसका व्यापक प्रभाव पड़ा। आर्य जगत् के अनेक मनीषी तथा विद्वान् पाठकों ने मेरे निर्णय से सहमति व्यक्त करते हुए मुझे पत्र लिखे तथा इन सहमति–सूचक पत्रों का सिलसिला वेदवाणी (जनवरी 1990ई.) में प्रकाशित बृहत् निबन्ध के बाद भी चलता रहा। प्रत्यक्ष रूप से मिलने पर सहमति देनेवाले विद्वानों में स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती तथा डॉ. कुशलदेव शास्त्री प्रमुख थे। प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने वेदवाणी में वृहन्निबन्ध छपते ही तुरन्त एक पोस्टकार्ड लिखकर बधाई दी। वर्ष 1990–1999 में सार्वदेशिक सभा द्वारा आयोजित दिल्ली में आर्य महासम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में इसके सम्पादक डॉ. शिवकुमार शास्त्री (संयोजक–आर्य केन्द्रीय सभा तथा सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा) ने मेरे लेख को प्रथमतः छापा। डॉ. जयदत्त शास्त्री उप्रेती तथा डॉ. सुरेन्द्र देव शास्त्री स्नातक के भी सहमति–सूचक पत्र मिले। वैद्य विश्वम्भर दयाल गोयल लखनऊ ने विस्तृत पत्र लिखकर तिथि–पत्रक पर पूरा गणितीय प्रकाश डालते हुए मेरे निर्णय से सहमति प्रकट की। आर्य जगत् के सुयोग्य विद्वान् पं. राजवीर शास्त्री ने तो 'दयानन्द सन्देश' अप्रैल 1999 के अंक में सम्पादकीय टिप्पणी में मेरे विचार का समर्थन करते हुए 'महर्षि' दयानन्द की प्रामाणिक जन्मतिथि' शीर्षक से मेरी पुस्तक का कुछ आवश्यक अंश 5 पृष्ठों में छापा। अब यह सामग्री मेरी इस पुस्तक के परिशिष्ट–2 में छपी है।

'वेदवाणी' में मेरे बृहत् निबन्ध छपने से पूर्व मेरा लेख प्राप्त होते ही पूज्य मीमांसकजी ने फरीदाबाद से मुझे पत्र में लिखा– "आपका लेख मैंने आद्यन्त दो बार पढ़ा। आपने जो परिश्रम किया उसके लिए साधुवाद। मेरे पास यहाँ सब सामग्री नहीं है और ना ही अब किसी गहन चिन्तन के अनुरूप उपयुक्त मेरा शरीर है।..... छपने योग्य है इतना तो निश्चित है। मैं अपना निश्चय नहीं बना पाया। डॉ. भवानीलाल भारतीय ने 7 सितम्बर 1999ई. को लिखे पत्र में लिखा–"आपकी पुस्तक ऋषि जन्मतिथि विषयक देख गया हूँ। आपकी विचारसरणि तर्कपूर्ण ही है। मैंने जो तिथि दी वह तो लिखित प्रमाण पर आधारित थी जिसकी प्रामाणिकता सिद्ध की जानी है। अतः मुझे आप प्रतिपक्ष में न रखें।" मेरे लिए यह आह्लाददायक अवसर है कि इस पुस्तक के छपते–छपते डॉ. भारतीयजी ने अपना –ऋषि दयानन्द की जन्मतिथि पर पुनर्विचार' शीर्षक से एक गवेषणापूर्ण निबन्ध भेजा। इस लेख में उन्होंने फाल्गुन कृष्ण दशमी शनिवार 1881 वि. तदनुसार 12 फरवरी 1825ई. के पक्ष में अपनी मुहर लगा दी। उनके इस लेख को इस पुस्तक के परिशिष्ट –5 में हम सहर्ष प्रकाशित कर रहे हैं।

जब वेदवाणी के अंक में मेरा विस्तृत लेख छपा तब सम्पादकीय लिखते हुए पं. मीमांसकजी ने लिखा–" आदित्यपाल सिंह जी ने औदीच्य 1881 संवत् की भाद्रपद शुक्ला नवमी पर 21 वर्ष पूरे होने पर सं. 1902 की भाद्रपद शुक्ला नवमी पर 21 वर्ष पूरे होने पर सं. 1902 में ही छोड़ना माना है। यह ऋषि दयानन्द के लेख के सर्वथा विपरीत है।"

"सिद्धपुरा पहुँचना– आदित्यपाल सिंह जी ने सं. 1902 की कार्त्तिकी पूर्णिमा पर सम्पन्न होनेवाले सिद्धपुर के मेले पर पहुँचना स्वीकार किया है। अर्थात् घर छोड़ने से लेकर सिद्धपुर पहुँचने के समय को लगभग 2 मास में समेट दिया है जब कि ऋषि दयानन्द ने पूना प्रवचन में कोठ कांगड़ में 3 मास ठहरने का उल्लेख किया है। इसके साथ ही यह ऋषि दयानन्द के सं. 1903 में घर छोड़ने के विरुद्ध भी है (द्र. ज्वलन्तकुमारजी का लेख)।"

गृह्यसूत्रों के मर्मज्ञ वैदिक विद्वान् डॉ. वेदपालजी मेरठ तथा 'वैदिक पथ' के पूर्व सम्पादक श्री सत्येन्द्रसिंह आर्य मेरठ का विचार था कि इस पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ा जाए तो जो प्रश्न और आपत्तियाँ लोग उठाते हैं, उनका समाधान हो जाएगा। पं. इन्द्रदेवजी (अब स्वामी इन्द्रदेव यति) की आपत्ति यह थी कि "श्री ज्वलन्तकुमार ने 'महर्षि की प्रामाणिक जन्मतिथि' पुस्तक में मेरा नाममात्र उल्लेख किया है। मेरे मत की आलोचना नहीं की है पं. भीमसेन शास्त्री के मत का पिष्टपेषण किया है ('आर्यराष्ट्र विशेषाङ्क' पृष्ठ 2, 13 जून 1995ई।" अतः इस बार परिशिष्ट 5 में उनके मत की समीक्षा भी कर दी है। पूर्व में मैंने इसलिए नहीं लिखा था कि प्रो. भीमसेन शास्त्री ने पहले ही उनके प्रश्नों और आपत्तियों का यथोचित उत्तर दे दिया था। 'यति' जी लिखते हैं कि मैंने प्रो. भीमसेनजी का पिष्टपेषण किया है, इसके स्थान पर यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि मेरे शोधनिबन्ध के प्रेरक प्रो. भीससेन शास्त्री अवश्य हैं और मेरे चिन्तन तथा पर्यालोचन से उनके निष्कर्ष की पुष्टि हुई है, इस तथ्य को मैंने अपनी पुस्तक में अनेक बार लिखा है।

जहाँ तक श्री आदित्यपाल सिंह के मत और लेखन का प्रश्न है, मेरा यह दृढ़ मत है कि श्री आदित्यपाल सिंह को स्वामीजी की आत्मकथा से मतलब ही नहीं है। वे उसमें जोड़–तोड़, घटाव–बढ़ाव, संशोधन–प्रक्षेपण करते रहते हैं। श्री आदित्यपाल सिंह ने 18 जनवरी 1990 को लिखे पत्र में (पं. श्री युधिष्ठिर मीमांसकजी को सम्बोधित– जिसकी एक प्रतिलिपि उन्होंने मुझे भी सूचनार्थ भेजी थी) यह लिखा–"..... मैं पं. ज्वलन्तकुमार शास्त्री के लेख का विस्तृत उत्तर नहीं दे रहा हूँ।"

अब इस पुस्तक का आर्यसमाज के संगठनात्मक ढाँचे पर पड़े प्रभाव की थोड़ी चर्चा करना भी आवश्यक समझता हूँ। सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा द्वारा 1881 तिथि की पुष्टि करने के बाद भी 1990–1991ई. से पूर्व

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

"धर्म पर मरने वाले आर्य समाजियों का जीवन परिचय"

● खुशहाल चन्द्र आर्य

वैसे तो आर्य समाजियों की देश, धर्म व समाज के लिए मरने वालों की काफी बड़ी श्रृंखला है, जिनमें क्रान्तिकारियों में भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, श्यामजीकृष्ण वर्मा, भाई परमानन्द व लाला हरदयाल M.A. आदि अनेकों आर्य समाजियों ने देश के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये या जेलों में रहकर कठिन यातनाएँ सहीं। वैदिक धर्म की रक्षा व उसे फैलाने के लिए तथा शुद्धि कार्य को करने के लिए भी आर्य समाजियों के बलिदान कोई कम नहीं हैं। सब से पहले आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने ही वैदिक धर्म को फैलाने के लिए तथा सत्य से विचलित न होने के लिए अपने प्राण दिये, यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। प्रत्येक स्वाध्यायशील व्यक्ति उनके बलिदान को जानता है। स्वामी जी के बाद भी पाँच महापुरुषों ने अपने प्राण, वैदिक धर्म की रक्षा व फैलाने के लिए हँसते–हँसते समर्पित किये जिनमें से पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द व महाशय राजपाल को तो काफी स्वाध्यायशील व्यक्ति जानते हैं, परन्तु दो आर्य समाजी जिनके नाम श्रीयुत् तुलसी राम व म. रामचन्द्र हैं जिनको बड़े स्वाध्यायशील व्यक्ति भी नहीं जानते, उनके साथ हम बड़ा अन्याय कर रहे हैं। उन बलिदानियों की जानकारी सब पाठकों को हो, इस उद्देश्य से मैंने यह लेख लिखा है। उन पाँच बलिदानियों का जीवन परिचय इसी भाँति है:–

1. पं. लेखराम:– पं. लेखराम आर्य मुसाफिर, आर्य प्रतिनिधि सभा, पजांब के एक अत्यन्त उत्साही और निर्भीक उपदेशक थे। उन्होंने उर्दू भाषा में वैदिक धर्म सम्बन्धी बहुत–सी पुस्तकें लिखीं और मुसलमानों की पुनर्जन्मादि विषयक शंकाओं का बहुत अच्छा उत्तर दिया। उन्होंने महर्षि दयानन्द सरस्वती की एक उत्तम जीवनी भी लिखी। उनके निर्भयता पूर्वक वैदिक धर्म प्रचार तथा शुद्धि के कार्यों से कुछ मुलसमान चिढ़ गये और एक मतान्ध मुसलमान 6 मार्च 1896 को पं. लेखराम जी के पास आया और शुद्ध होने की इच्छा प्रकट की, साथ ही बीमार होने का बहाना भी किया। उस समय पण्डित जी महर्षि दयानन्द का जीवन–चरित्र लिखकर थकावट हटाने के लिए अंगड़ाई ले रहे थे, उस दुष्ट व्यक्ति ने मौका पाकर अपने काले कम्बल में छिपाए छुरे से उन पर वार कर दिया जिससे घायल होकर उनके प्राण–पखेरू उड़ गये। इस प्रकार महर्षि दयानन्द के बाद पं. लेखराम का धर्म के लिए पहला बलिदान हुआ।

2. इनके बाद पजांब प्रान्त के फरीदकोट रियासत के निवासी श्रीयत् तुलसीराम जी नामक सज्जन का बलिदान स्मरण रखने योग्य है। यह महाशय स्टेशन मास्टर होते हुए समय निकाल कर धर्म प्रचार में लगे रहते थे। जैन मत का उन्होंने अच्छी प्रकार अध्ययन किया था और उनके ग्रन्थों व सिद्धान्तों की वे निर्भय होकर समालोचना किया करते थे, जिससे चिढ़कर कुछ जैनियों ने उन्हें एक दिन रात के समय सड़क पर जाते हुए घेर लिया और मिर्च मिली रेत उनके ऊपर फेंककर तथा डण्डे मार कर उन्हें मार डाला। यह एक आर्य समाजी का धर्म के लिए दूसरा बलिदान था।

3. इसके बाद महाशय रामचन्द्र नामक एक जम्मू प्रान्त वासी सज्जन का बलिदान जो रियासत में खजाँची का काम करते थे, सन् 1923 में हुआ। यह महाशय मेघ नामक अछूत कहलाने वाली जाति के उद्धार के लिए बहुत प्रयन्त करते थे। इनके प्रयास से दूसरे लोगों ने भी उस विषय में खास कोशिश शुरू कर दी थी। पर कई राजपूतों को यह बात बुरी लगी, उन्होंने म. रामचन्द्र पर लाठियों से वार कर दिया और उन्हें मार कर ही छोड़ा। इस प्रकार दलितोद्धार और धर्म–प्रचार का पवित्र कार्य करते हुए इनका बलिदान अपने ही भूले–भटके राजपूत भाइयों के हाथ केवल 26 वर्ष की उम्र में हुआ। इनके बलिदान का परिणाम यह हुआ कि दलितोद्धार का काम खूब जोर–शोर से होने लगा। जिन राजपूत भाइयों ने म. रामचन्द्र को मारा था, वे खुद आर्य समाज के बड़े प्रेमी बन गये और इस तरह बीस हजार के लगभग मेघों को थोड़े ही समय में आर्य समाज में शामिल कर लिया गया।

4. यह बलिदान पूज्यपाद स्वामी श्रद्धानन्द जी का दिल्ली में 23 दिसम्बर 1926 को अब्दुल रशीद नामक मतान्ध मुसलमान के हाथों हुआ था। इसका विशेष कारण श्री स्वामी जी का शुद्धि–विषयक आन्दोलन जोर से चलाना था, जिससे मतान्ध मुसलमान चिढ़ते थे और श्री स्वामी जी को मारने का षड्यन्त्र व साजिश करते रहते थे। श्री स्वामी जी के पास इस तरह के बहुत पत्र भी आते थे जिनमें उन्हें शुद्धि कार्य को बन्द करने और ऐसा न करने पर मारे जाने की धमकी दी जाती थी, पर स्वामी श्रद्धानन्द जी एक निर्भीक धर्मवीर सन्यासी थे। वे ऐसी धमकियों की ज़रा भी परवाह न करते हुए धर्म का काम किए चले जाते थे। उनके प्रयत्न से एक लाख से अधिक मलकाने राजपूत, जो बहुत समय पूर्व मुसलमान बनाए जा चुके थे, फिर आर्य धर्म (हिन्दू धर्म) में दीक्षित किए गये। 25 मार्च 1926 को असगरी बेगम को उसकी इच्छानुसार शुद्ध करके शान्तिदेवी नाम दिया गया। इससे मतान्ध मुसलमान बहुत चिढ़े और श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा उनके साथियों पर जबरदस्ती शुद्ध करने का मुकदमा चलाया। इस मुकदमे का फैसला श्री स्वामी जी के पक्ष में हुआ। इससे मुसलमानों का क्रोध और भी बढ़ गया। अन्त में अब्दुल रशीद नामक एक मुसलमान श्री स्वामी जी के मकान पर 23 दिसम्बर सन् 1926 को आया और पानी पीने को मांगा। पानी पी कर उसने स्वामी जी पर चार गोलियाँ चलाईं और उनके पवित्र जीवन का अन्त कर दिया। यह महर्षि दयानन्द के बाद चौथा बलिदान था।

5. यह बलिदान लाहौर के एक प्रसिद्ध आर्य पुस्तकालय के संचालक महाशय राजपाल जी का 6 अप्रैल 1929 को एक इल्मदीन नामक मतान्ध मुसलमान के हाथों लाहौर में हुआ। इसका कारण यह था कि महाशय राजपाल जी द्वारा प्रकाशित, 'रंगीला रसूल' नामक पुस्तक से मुसलमान चिढ़े हुए थे। कहानी इसी भाँति है कि मुसलमानों ने भगवान श्री कृष्ण और महर्षि दयानन्द के सम्बन्ध में कुछ अश्लील पुस्तकें मनघड़न्त छाप दी थी। आर्य समाज के एक महान विद्वान् पं. चमुपति जी इनके बदले में मोहम्मद साहब का पूरा जीवन पढ़कर एक "रंगीला रसूल" नाम की पुस्तक छापी जो उन मनघड़न्त अश्लील पुस्तकों का एक सही उत्तर था। इसका प्रकाशन महाशय राजपाल जी ने यह कह कर किया कि मैं प. चमूपति जी का नाम न छापते हुए इस पुस्तक का प्रकाशन करूँगा और उन्होंने प्रकाशित कर दी। मुसलमानों के बहुत कहने पर भी कि आप इस पुस्तक के लिखने वाले का नाम बतला दो तो हम आपको कुछ नहीं कहेंगे परन्तु महाशय जी ने विद्वान् का नाम नहीं बतलाया और वे एक मतान्ध मुसलमान युवक के हाथों मरकर मोक्ष धाम को प्राप्त हुए। यह महर्षि दयानन्द के बाद धर्म के लिए पाँचवां बलिदान था। यह एक विचित्र ढंग का बलिदान था जिसमें एक बलिदानी ने एक बड़े वैदिक विद्वान् के प्राण बचाने के लिए अपने प्राण दे दिए और अमर हो गये।

मैं इन सभी बलिदानी महापुरुषों को नमन होकर श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

180 महात्मा गान्धी रोड (दो तल्ला)
फोन 22183825 (033)
मो. 9830135794

☞ पृष्ठ 05 का शेष

अज़ब जादूगर ने बजायी...

फकीर वही जादूगर, वही दिव्य मूर्ति महात्मा दयानन्द हैं, उन्होंने जो कहा था, फकीर की उन बातों की लकीर हृदय पर गहरी उभर आई है और अन्ततः उन्हें लाहौर में हाथ लग गया जादूगर के जादू का पिटारा सत्यार्थप्रकाश। बढ़ती आयु, बढ़ती आय, बढ़ती मेधा बढ़ती दृष्टि के फलस्वरूप वह मुख्तार मुंशीराम वकील मुन्शीराम, महात्मा मुंशीराम, आचार्य मुंशीराम से आगे निकल गया स्वयं एक फकीर स्वामी श्रद्धानन्द जादूगर श्रद्धानन्द। उन्होंने खोल दिया कन्या विद्यालय, गुरुकुल आर्य समाज और न जाने क्या क्या। ऐसा एक नहीं और न जाने कितनों पर उस जादूगर का जादू चला और उन सब पुरुषों ने महापुरुष बनकर वेद वीणा को न केवल विश्व व्यापी बनाया, प्रत्युत लुप्तप्राय वेद धर्म को पुनः प्रतिष्ठित कर दिया।

आकुल व्याकुल अश्रुपात करती परतंत्र वृद्ध भारतमाता की बेड़ियाँ कट गयी। खोई हुई घूरे पर उपेक्षित पड़ी हुई वेद वीणा को स्वच्छ शुद्ध करके फिर से भारत माता को, मानवता की माता को प्रदान करने के लिए ही तो उस जादूगर का जन्म वीणा की टन–टन टंकारा में हुआ था। प्रतिवर्ष जहाँ देश देशान्तर से आर्य आते, मेला लगाते ऋषिबोध से निज बोध जगाते। टंकारा वाले जादूगर। तुम प्रणम्य हो, परिपुण्य तुम्हारा जादू, और धन्य तुम्हारी वेद वीणा। अखिल विश्व के सर्वोच्च संगठन संयुक्त राष्ट्र संघ ने यदि वेद वीणा–ऋग्वेद को विश्व धरोहर घोषित करके संरक्षित किया है तो कभी वह दिन भी आएगा जब वेद वीणा के प्रभुदत्त स्वर 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' न केवल बोल उठेंगे अपितु प्रभावी होकर विश्व मानवता को ''वसुधैवकुटुम्बकम् एवं विश्वम् एकनीडम्'' के लक्ष्य की ओर अग्रसर करने में समर्थक होंगे। वेदों की वीणा अखिल विश्व में बजवा दी देव दयानन्द ने। धन्य हो टंकारा धन्य हो देव दयानन्द का हुंकारा जादू का पिटारा सत्यार्थ प्रकाश तुम्हारा। धन्य हो, धन्य हो, महर्षि तुम धन्य हो।

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम) रामघाट मार्ग
अलीगढ़ 202001 (उ.प्र.)

त्यागपूर्वक भोग

● **नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'**

यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रथम मंत्र का अंश "तेन त्यक्तेन भुंजीथा" हम मनुष्यों को त्यागपूर्वक भोग करने का आदेश देता है। सुनने और देखने में त्याग और भोग दोनों विपरीतधर्मी प्रतीत होते हैं। सामान्य मनुष्य यही सोचता है कि यदि किसी साधन, सुविधा या वस्तु का भोग ही कर लिया तो उसका त्याग कैसे संभव है और यदि त्याग कर दिया तो भोग कैसे कर सकते हैं। परन्तु यदि चिन्तन करें तो स्पष्ट हो जाता है कि "ना भोगने का नाम त्याग नहीं है अपितु भोग से ना चिपटने, भोग्य पदार्थों में अनासक्ति, भोग्य पदार्थों के संग्रह की भावना को छोड़ने का नाम ही त्याग है।"

मनुष्य की जीवन यात्रा के उत्तरोतर क्रमिक विकास पर दृष्टिपात करें तो त्याग का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। जिस प्रकार छत पर चढ़ने के लिए हमें सीढ़ी दर सीढ़ी ऊपर चढ़ना होता है और सीढ़ियाँ चढ़ने के लिए पहली सीढ़ी को छोड़ने के उपरान्त ही हम दूसरी सीढ़ी पर पांव रख सकते हैं। यानी दूसरी, तीसरी, चौथी सीढ़ी दर सीढ़ी ऊपर जाने के लिए उससे पूर्व की सीढ़ियों को छोड़ना या उनका त्याग करना अनिवार्य हो जाता है। यदि व्यक्ति पहली सीढ़ी पर ही चिपका रहे या खड़ा रहे तो वह चाह कर भी ऊपर नहीं चढ़ पाएगा। इस दृष्टांत से यह तो स्पष्ट है कि ऊपर चढ़ने के लिए, लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सीढ़ियों अर्थात् साधन का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है लेकिन इस साधन का प्रयोग साधक द्वारा सदा साध्य की प्राप्ति के लिए ही किया जाना चाहिए। यदि साधक साधन को ही साध्य मान ले और उससे चिपक जाए तो वह कभी भी साध्य की प्राप्ति नहीं कर सकता। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि साधन कभी भी साधक के साथ नहीं चिपकता। कभी सीढ़ी बंधन बन कर पथिक के पैरों को नहीं बांधती। यह तो पथिक ही आलस्य वा प्रमादवश सीढ़ी पर खड़ा हो जाता है। साधन से प्रेम करके उससे चिपकने वाला व्यक्ति कभी अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। मधुमक्खी यदि अपने बनाए मधु में ही फंस जाए तो छटपटा कर मर जाती है। ठीक यही स्थिति हम मनुष्यों की ईश्वर प्रदत्त प्रकृति इसके सौंदर्य व ऐश्वर्य को लेकर है।

परन्तु यह भी ठीक है कि सृष्टि के रचयिता परम पिता परमेश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण इस सृष्टि में रहने वाले जीवों के उपभोग व उपयोग के लिए किया है और जीव का अधिकार है कि वह इन ईश्वर प्रदत्त साधनों का उपयोग करे। त्रैतवाद के सिद्धांत को पुष्ट करता सुप्रसिद्ध वेद मंत्र **"द्वा सुपर्णा..."** स्पष्ट रूप से जीव द्वारा प्रकृति के फल के भोग के अधिकार को स्थापित करता है। परन्तु **तेन त्यक्तेन भुंजीथा** मंत्र में इस अधिकार की सीमा स्पष्ट है। यानी मनुष्य त्यागपूर्वक भोग करे। इसके लिए हमें यह समझना होगा कि इन साधनों के प्रयोग का अधिकार ईश्वर प्रदत्त है और इन साधनों के ईश्वर प्रदत्त होने के कारण इनका उपयोग साध्य की प्राप्ति के लिए किया जाना चाहिए।

जगत के उपयोग में त्यागभाव धर्म का मुख्य अंग है। त्याग के बिना लक्ष्य की प्राप्ति संभव नहीं है। संसार के समस्त अधिकार सेवा और त्याग से प्राप्त होते हैं। मनुष्य का जीवन सदा देने के लिए होता है लेने के लिए नहीं। जैसे बादल ऊँचाई को पाकर सबके उपकार के लिए बरसते हैं वैसे ही मनुष्य भी अपने जीवन में ऊपर उठकर दूसरों का उपकार किया करे। खुशी का सबसे बड़ा रहस्य यही त्याग की भावना है। खुशी इस बात पर निर्भर करती है कि आप क्या दे सकते हैं। त्याग के बिना ना तो ईश्वर प्रेरणा होती है और ना ही प्रार्थना। त्याग के समान कोई सुख नहीं होता। इसलिए मनुष्य को साधक के रूप में ईश्वर प्रदत्त साधनों का उपयोग–उपभोग त्यागपूर्वक करते हुए अपने लक्ष्य साध्य की प्राप्ति के लिए करना चाहिए।

602 जी एच 53
सैक्टर 20, पंचकूला
मो. 09467608686, 01724001895

☞ पृष्ठ 06 का शेष

द्वे वचसी...

आर्यसमाजों द्वारा इस तिथि को विशेष समारोह नहीं किया जाता था। कुछ लोग 'ऋषिबोध दिवस' पर जन्मतिथि मनाने की औपचारिकता निभा लेते थे। एकाध जगह पर भाद्रपद शुक्ला नवमी अथवा 2 सितम्बर या 20 सितम्बर को ऋषि का जन्मदिन मनाया जाता था। मेरे द्वारा इस विषय पर बृहत् शोधनिबन्ध वेदवाणी में छपवाने, उसे अलग पुस्तकाकार उपलब्ध कराने तथा उस लेख का एक लघु रूप देकर प्रायः सभी मुख्य आर्यपत्रों में छपवाने तथा अधिकांश आर्यविद्वानों तथा जागरूक आर्य पाठकों द्वारा मेरे निष्कर्म का समर्थन करने का परिणाम यह निकला कि विहार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा ढाका पूर्वी चम्पारण में मनाए गए आर्य सम्मेलन में स्वामी आनन्दबोध सरस्वती (पूर्व नाम–लाला रामगोपाल शालवाले, प्रधान–सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा) ने मुझ से कहा कि आपने अपने शोध द्वारा धर्मार्य सभा के निर्णय को सम्पुष्ट कर दिया है। अब मैं इसी तिथि (फाल्गुन बदी दशमी) पर सभी आर्य समाजों द्वारा ऋषि दयानन्द की जयन्ती या जन्मदिवस समारोह मनाए जाने कें लिए परिपत्र जारी करता हूँ। सो उन्होंने यह कार्य किया और परिणाम सामने है कि आज प्रायः 11 प्रतिशत से भी अधिक आर्य समाजों द्व ारा फाल्गुन बदी दशमी तिथि पर प्रत्येक वर्ष ऋषि–जयन्ती पर फाल्गुन बदी दशमी को ही निर्बन्धित अवकाश (Restricted Holyday) घोषित किया है। शुरू–शुरू में 12 फरवरी को अवकाश मनाया जाने लगा था, फिर आर्य विद्वानों (मान्य अमर स्वामीजी ने विशेषरूप से इस पर लिखा) द्वारा भारतीय तिथि के अनुसार फाल्गुन बदी दशमी को ही मनाने का आग्रह किया गया। फलस्वरूप प्रतिवर्ष फाल्गुन बदी दशमी को तथा अनेक आर्यसमाजों में फाल्गुन बदी दशमी से फाल्गुन बदी चतुर्दशी तक पाँच दिनों का (पञ्चदिवसीय) विशेष समारोह (कथा या प्रवचनमाला) के रूप में भी मनाया जाता है। भारत की प्राचीन पंचांग प्रकाशन संस्था ठाकुर प्रसाद बुकसेलर कचौड़ी गली वाराणसी ने 2001ई. के पंचांग कैलेण्डर में फरवरी मास में व्रत–त्यौहार शीर्षक के अन्तर्गत फाल्गुन कृष्ण दशमी 19 फरवरी 2001 को स्पष्ट रूप से स्वामी दयानन्द सरस्वती जयन्ती लिखा है। कबीर सम्प्रदाय के सम्मानित विद्वान् श्री राम अभिलाषदास ने अपने द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ कबीर दर्शन में प्रसंगतः 'स्वामी दयानन्द दर्शन' का विवरण देते हुए उनकी जन्मतिथि फाल्गुन बदी दशमी 12 फरवरी 1825 लिखी है। इस प्रकार अनेक उदाहरण हैं जिनसे विद्वानों द्वारा धर्मार्य सभा द्वारा परिपोषित स्वामी दयानन्द सरस्वती की जन्मतिथि को मान्यता दी जा रही है।

आभार–प्रकाशन – लगभग 20 वर्षों के बाद मैं अपनी इस पुस्तक का संशोधित, परिवर्द्धित तथा 6 परिशिष्टों सहित द्वितीय संस्करण प्रकाशित कर पा रहा हूँ तो इसमें 3 तीन महानुभावों का विशेष योगदान है। डॉ. कुशलदेव शास्त्री ने हमसे इसकी एक प्रति लेकर श्री घूडमल प्रह्लादकुमार आर्य न्यास हिण्डौन सिटी द्वारा पूरी पुस्तक श्री अभयकुमार मिश्र से शुद्धतापूर्वक कम्पोज कराकर स्वयं प्रूफ पढ़ा तथा एक स्थल पर एक–दो पंक्ति हटाने का सुझाव दिया, किन्तु यह भी कहा कि सर्वाधिकार आपका है। मैंने अग्रज डॉ. साहब का सुझाव सहर्ष स्वीकार कर लिया। वस्तुतः उनका निर्देश दूरदर्शितापूर्ण था। मान्यवर बड़े भाई श्री सत्येन्द्रसिंहजी आर्य के सर्वात्मना सहयोग को मैं कभी नहीं भूल सकता। इन्होंने सम्पूर्ण पुस्तक को ध्यान से पढ़कर आवश्यक सुझाव दिए, प्रूफ पढ़े तथा बड़े भाई होकर भी हिण्डौन सिटी के प्रवासकाल में मेरी हर छोटी–बड़ी सुविधाओं का पूरा–पूरा ध्यान रखा। न्यास के प्रधान श्री प्रकार देवजी आर्य को हिण्डौन सिटी में रहते हुए निकटता से देखने–परखने का अवसर मिला। वे इस कलिकाल में आदर्श पुरुष हैं अपने धन और श्रम का सदुपयोग आर्य साहित्य के प्रकाशन में करके अपने कुल की तथा पूर्वजों की कीर्ति विस्तार कर रहे हैं– कीर्तिरक्षरसंयुक्त चिरं तिष्ठति भूतले। विशेष रूप से आर्य समाज की आँख माने जानेवाले सम्मानास्पद प्रो. राजेन्द्रजी जिज्ञासु को मैं किन शब्दों में आभार प्रकट करूँ जिन्होंने मेरी पूरी पुस्तक को मनोयोगपूर्वक पढ़के विद्वत्तापूर्ण **प्राक्कथन** लिखकर इस पुस्तक की महत्ता और शोभा द्विगुणित कर दी है।

"अग्निर्ज्योति" चाणक्यपुरी
अमेठी उ.प्र.–227405
दूर. 05368–212007
मो. 09415185521

☞ पृष्ठ 02 का शेष

आनन्द गायत्री कथा

और त्याग के मार्ग पर नहीं चलता तो याद रखो कि गायत्री के जाप से कोई काम नहीं होगा।

कई मनुष्यों ने एक–एक करोड़ जप किया। मेरे पास वे आते हैं और कहते हैं कि एक करोड़ मन्त्र जप लिए, फिर भी कुछ नहीं हुआ। अरे! हो कैसे? तुमने विज्ञान की पुस्तक पढ़ ली; प्रयोगशाला (लैबॉरेटरी) में जाकर प्रयोग नहीं किया। गायत्री का फल चाहते हो तो आओ! संसार की इस प्रयोगशाला में गायत्री का जो जाप करो, उस पर आचरण भी करो। मैं ईश्वर को तो कहूँ 'देवता' और स्वयं 'लेवता' बनकर दूसरों की सम्पत्ति छीनता फिरुँ तो परमात्मा की कृपा कहाँ से मिलेगी? परमात्मा तुम्हारी माला से प्रसन्न नहीं होता, वह प्रसन्न होता है आचरण से। वह कृपा करता है उस पर जो उसके प्राणियों पर कृपा करता है।

पहले–पहल जब मैं गंगोत्री पहुँचा तो वहाँ के रहने वाले महात्माओं से मिला। कुछ अत्यंत तपस्वी महात्मा वहाँ रहते हैं। मैंने सोचा, ये लोग यहाँ बैठे हैं, नीचे संसार दुःखों की भट्ठी में जल रहा है। इन्हें क्यों न कहूँ कि नीचे पहुँचे और अपने तप और योग से संसार का कल्याण करें! एक महात्मा से बात हुई तो उन्होंने कहा– 'एक तू आया है ऐसी बात कहने वाला, नहीं तो जो कोई आता है अपना ही दुखड़ा लेकर आता है। किन्तु सुनो आनन्द स्वामी! संसार हमारे लिए मर गया और हम संसार के लिए मर गए। हमें संसार से कुछ लेना नहीं।'

मैंने हँसते हुए कहा– 'धन्य हो महाराज! आपने तो गुट्ठी काट दी।' एक और महात्मा के पास गया। वे बोले–'तू कहता तो ठीक है। संसार वास्तव में अत्यंत दुखी है। हम इस बात को जानते भी है, किन्तु हम प्रार्थना के अतिरिक्त और क्या कर सकते है? हम कहीं आते–जाते नहीं। हम यहाँ बैठकर संसार के लिए प्रार्थना करते हैं।' तब मैं स्वामी रामानन्द के पास गया। स्वामी रामानन्द जी महान् तपस्वी हैं। सर्दी–गर्मी सदा ही गंगोत्री रहते हैं। आजकल गंगोत्री में हिमपर्वत खड़े है। चारों ओर हिम ही हिम है। इसमें स्वामी रामानन्द कपड़े पहने बिना ही सर्वथा नग्न रहते हैं। हिम में रहने के कारण उनका शरीर सूखे और जले चमड़े की भाँति हो गया है। ग्यारह वर्ष मौन धारण करके बैठे रहे थे। बहुत ऊँचे महात्मा। राजगुरु पण्डित धुरेन्द्र शास्त्री जी पिछली बार मेरे साथ गंगोत्री में गए, तो स्वामी रामानन्द जी को छोड़कर और कोई महात्मा उन्हें अच्छा नहीं लगा। इन्हीं स्वामी रामानन्द के पास मैं गया। उन्हें देश की अवस्था सुनाई और बताया कि लोग कितने दुःखी है। अमरीका और रूस की बातें सुनाईं। एक बार, दो बार, तीन बार मैं उनके पास गया। घण्टा–दो घण्टा उन्हें बातें सुनाता रहा। वे सुनते रहे और चुपचाप बैठे रहे। कोई भी उत्तर उन्होंने नहीं दिया। अन्त में तंग आकर एक दिन इनके पास गया। वे गंगा के किनारे एक बड़े पत्थर पर बैठे थे। मैंने जाकर फिर उनसे बात कहनी प्रारम्भ की। वे फिर चुप। मैंने कहा, 'स्वामी जी'! इतने दिनों से मैं आपको संसार की अवस्था सुना रहा हूँ, परन्तु आप ऐसे चुप रहते हैं, जैसे यह पत्थर। आपको सुना दिया और इस पत्थर को सुना दिया, दोनों एक बराबर है। क्या आप कोई उत्तर नहीं दे सकते?' स्वामी रामानन्द धीरे से मुस्कराए। मैंने कहा– 'अब कृपा करो!' तब उन्होंने हाथ से संकेत किया, आँखें मूँद लीं। थोड़ी देर बाद आँखे खोलकर बोले– 'कहो आनन्द स्वामी!' मैंने कहा– 'आपको मेरा नाम कैसे ज्ञात हो गया?' मैंने तो कभी बताया नहीं और कोई मुझे जानता नहीं?' वे बोले कि 'हम यहाँ काहे को बैठे हैं? इतने वर्ष हो गए यहाँ बैठे–बैठे, क्या तेरा नाम भी नहीं जा सकते?' मैंने कहा, 'मैं यह प्रार्थना करने आया हूँ कि बहुत तप कर लिया आपने। अब नीचे चलिए, संसार का कल्याण कीजिए।' वे बोले, 'नहीं, ऐसा नहीं करेंगे। आनन्द स्वामी! यह संसार बहुत बिगड़ गया है। कपड़े मैले हो जाएँ। रोगी वैद्य के पास आता है। वैद्य बिना बुलाए रोगी के पास क्यों जाए? तेरे यत्न करने से संसार सुधरेगा नहीं। इसे एक बहुत बड़ी भट्ठी में जाना है। जाने दो इसे। तू मुझे नीचे चलने को कहता है। मैं कहता हूँ तू भी न जा नीचे। यह है गंगोत्री के महात्माओं का दृष्टिकोण।

परन्तु मैं जिस महापुरुष को अपना गुरु मानता हूँ उसने तो यह बात मुझे नहीं सिखलाई। गंगोत्री के एक भाग में वह कन्दरा देखी जहाँ परम योगी महर्षि दयानन्द ने घोर तप किया था। धराली से पौने दो मील के अन्तर पर गंगा के किनारे है वह कन्दरा। धराली के नम्बरदार श्री नारायणसिंह ने वह कन्दरा मुझे दिखाई और बताया कि उनके पिता ठाकुर शिवसिंह ने स्वामी जी को देखा था, उनकी सेवा की थी। स्वामी जी को भोजन देने के लिए ठाकुर शिवसिंह स्वयं जाया करते थे। नारायणसिंह ने यह भी बताया कि इस कन्दरा में महर्षि ने एक बार तीन मास की समाधि लगाई थी। इतना–कुछ करने के बाद भी, योगाभ्यास के इस ऊँचे स्तर पर पहुँचने के बाद भी वे नीचे आए, जिससे कि संसार को सत्यमार्ग बतला सकें; अन्धकार में भटकते हुए संसार को प्रकाश की ओर ले जाएँ।

मैंने स्वामी रामानन्द जी से कहा कि ' मैं तो उस गुरु का शिष्य हूँ। मुझे तो आराम से बैठना नहीं है। आप नहीं जाते तो आपकी इच्छा, परन्तु मुझे जाना है।' वे बोले– 'तू जा' मार टक्करें,, परन्तु कोई सुनेगा नहीं। संसार अभी सुनने की अवस्था में नहीं है।' और कई बार मैं सोचता हूँ कि उनकी बात कितनी सच्ची थी! वास्तव में यहाँ कोई नहीं सुनता। इस समय रात है। आप् लोग काम–काज से छुटकारा पाकर थोड़ी देर के लिए यहाँ आ गए, किन्तु यदि मैं कहूँ कि प्रातः 4 बजे से मेरे पास आइये, मैं आपको प्रभुदर्शन का मार्ग दिखाऊँगा, तो सम्भवतः कोई आएगा नहीं।

किन्तु कोई सुने या न सुने, कोई माने या न माने, यदि हम ईश्वर को 'देव' कहते हैं तो हमें स्वयं भी दूसरों को देना होगा। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज का यह नियम बनाया– 'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए।' महर्षि जी के महत्त्व को हम समझ नहीं सके। अभी इन्हें हुए केवल सौ वर्ष बीते हैं। सहस्त्र वर्ष के बाद सम्भवतः संसार उनकी महिमा को समझेगा, जब उनको मालूम होगा कि महान् कल्याणकारी बात महर्षि ने इस छोटे–से वाक्य में लिखी। उसके बिना कल्याण का कोई मार्ग दर्शन नहीं है। केवल अपनी उन्नति से सन्तुष्ट नहीं होना, दूसरों की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी इतनी बड़ी बात है कि ससांर इसे समझ ले और अपना ले तो समस्त आर्थिक खिंचावों का अन्त हो जाए। मोटरवाला समझे कि मेरे पास यदि मोटर है तो मेरे पड़ोसी के पास भी होनी चाहिए। पदाधिकारी समझे कि यदि मैं उच्च पद पर हूँ तो दूसरों को भी ऊँचे उठाना चाहिए। तब झगड़ा कहाँ रहेगा? ईर्ष्या, घृणा तथा खिंचाव कहाँ रहेगा? और आर्थिक संकट कहाँ रहेंगे? जो सदा ही कुछ वर्ष बाद संसार को लड़ाई की ओर धकेल देते हैं।

(उस समय स्वामी जी ने अपनी घड़ी की ओर देखा तो कहने लगे– 'शेष रहे गए हैं दस मिनट। दस मिनट में एक बात बताकर मैं समाप्त कर दूँगा फिर कीर्तन होगा।)

क्रमशः....

☞ पृष्ठ 03 का शेष

वह प्रभु महान सुपार

के साथ ही साथ बोलने वाले की भी हानि होती है। इस क्रोध से बचना आवश्यक होता है किन्तु इससे कैसे बचा जाए? जब हम उत्तम गुणों को पाने के लिए सुरुपक्रत्नु बनने का यत्न करते हैं तो वह सुरुपक्रत्नु प्रभु हमें क्रोध रहित कर कड़वे वचन बोलने से बचाते हैं। इतना ही नहीं वह प्रभु हमें कामवासना से भी बचाते हैं। कामवासना से भी बुद्धि नष्ट हो जाती है। प्रभु इस से भी हमें बचाकर सदा सुविचारों से युक्त करते हैं, सुविचार वाला बनाते हैं। इस सब के होते हुए भी यदि हमारे अन्दर लोभ आ जाता है तो हम इन उत्तम वृत्तियों के होने पर भी इनका प्रयोग उत्तम कार्यों में करने के स्थान पर बुरी वृत्तियों में ही लिप्त होकर धन एकत्र करने लगते हैं, दूसरों का धन छीनने लगते हैं। इस प्रकार हमारी उत्तम वृत्तियाँ दूषित हो जाती हैं, बुराईयों से ढक जाती हैं। इन उत्तम वृत्तियों का हम कुछ भी उपयोग नहीं कर पाते। अतः वह प्रभु हमें लोभ की वृत्ति से बचा कर यज्ञीय वृत्ति वाला बनाते हैं, हमें परिपक्व करने वाला बनाते हैं, दूसरों की सहायता करने वाला, दूसरों को दान देने वाला बनाते हैं।

उ. जिस प्रकार हम एक गो दुग्ध निकालने वाले ग्वाले के लिए उस गाय को ही लाते हैं, जो दुग्ध से लबालब भरी हो। जब ग्वाला दूध निकालने के लिए आता है तो हम यदि उसे ऐसी गाय के समीप ले जाएँ, जिसका दोहन क्या करेगा, दोहन पहले ही किया जा चुका हो तो ऐसी गाय का ग्वाला और दोहन क्या करेगा। ऐसी गाय से तो कुछ भी दूध प्राप्त नहीं हो सकता। अतः हम उसे ऐसी उत्तम गाय पेश करते हैं, जो दोहन के लिए उपयुक्त हो। जिस प्रकार यह गाय दुह कर अमृत तुल्य उत्तम दूध उस ग्वाले के माध्यम से गाय हमें देती है, उस प्रकार ही वह प्रभु भी काम, क्रोध, लोभ आदि से हमारी रक्षा करने वाले हैं, जब हम उन्हें प्रतिदिन पुकारते है तो वह प्रभु आ कर उस प्रकार ही आराधक के लिए, जो उन्हें प्रतिदिन स्मरण करता है, उसे उत्तम ज्ञान से परिपूर्ण कर देते हैं। जिस प्रकार गाय का दूध हमारे शरीर का पौषण करता है, उस प्रकार ही प्रभु का दिया हुआ यह ज्ञान, यह आध्यात्मिक ज्ञान का पोषण करता है।

104, शिप्रा अपार्टमेन्ट,
कौशाम्बी 201010,
गाजियाबाद
चलभाष 9718828O8

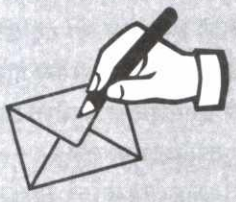

पत्र/कविता

गर्भाशय में आत्मा का प्रवेश कब होता है?

अब तक मैं ऐसा मानता रहा हूँ कि रज, वीर्य और आत्मा– तीनों के मेल होने पर ही गर्भ स्थापित होने के समय में ही होता है। परन्तु पिछले दिनों मैंने पुनर्जन्म पर निम्नलिखित चार पुस्तकें पढ़ीं–

1. Return to Life by Jim B. Tucker, M.D.
2. "I Saw light and Came here" by ERLENDUR HARALDSSON, PHD
3. "The Big Book of Reincarnation" by Roy Stemman
4. पुर्नजन्म मीमांसा– स्वामी इन्द्रवेश

इन चारों पुस्तकों में एक सौ से अधिक पुर्नजन्म की घटनाएं पूरी जाँच पड़ताल के बाद दी गई हैं। इन में बहुत सारी घटनाएं ऐसी भी हैं जिनमें पूर्वजन्म की मृत्यु और पुनर्जन्म में अन्तर 9 मास से ज्यादा का है। पर कुछ घटनाएँ ऐसी भी हैं जिनमें पूर्वजन्म की मृत्यु और पुनर्जन्म में अन्तर कुछ दिनों या कुछ सप्ताहों का है।

स्वामी इन्द्रवेश जी ने अपनी पुस्तक 'पुनर्जन्म मीमांसा' में पुनर्जन्म की ग्यारह घटनाएं दी हैं। उनमें एक घटना में पूवर्जन्म की मृत्यु और पुनर्जन्म में अन्तर तीन चार महीने का बताया गया है। दो घटनाओं में पूर्वजन्म की मृत्यु और पुर्नजन्म उसी एक दिन का बताया गया है। एक घटना में वह पूर्वजन्म में अपना ही पिता था, पिता की मृत्यु के समय उसकी मां दो मास से गर्भवती थी।

एक घटना आगरा के पास के एक गांव की है। पूर्वजन्म में वह आगरा का रहने वाला था। उससे टैलिफोन पर बात की गई। वह बताता है कि पूर्वजन्म में उसकी मृत्यु 16.6.1983 को हुई थी और पुनर्जन्म 12.12.1983 को हो गया। इस प्रकार पूर्वजन्म की मृत्यु में अन्तर 6 मास से भी कम का है।

क्या आर्य विद्वान इस विषय पर वैदिक दृष्टिकोण और अपने विचार व्यक्त करने का कष्ट करेंगे।

कृष्ण चन्द्र गर्ग
831 सैक्टर 10
पंचकूला, हरियाणा
दूरभाष: 0172–4010679

****

"कोई झुठलाए न वैदिक ज्ञान को"

वेद के सत्य ज्ञान से मुँह मोड़कर।
आस्था को रख दिया झिंझोड़कर।
अपने हाथों अपना ही सिर फोड़कर।
कोसता रहता है अपनी जान को।।

सदगुणों के कर्म से होकर परे।
जी भर के अपनी मनमानी करे।
अपने सारे दोष औरों पर धरे।
इस को क्या कोई जिए या मरे।
दम भरे तो खोटी बातों का भरे।
खो दिया अपनी खरी पहचान को।।

यज्ञ हवन करने से उकताने लगे।
उलझनों में फंस के रह जाने लगे।
बेसुरी सी रागनी गाने लगे।
अंधविश्वासों में दुःख पाने लगे।
ठोकरों पर ठोकरें खाने लगे।
कुछ समझता ही नहीं भगवान को।।

काश पहला सा दिलों में प्यार हो।
दूर हो सब दुःख सुखी संसार हो।
सच्चे वैदिक धर्म का प्रचार हो।
प्यारा सुन्दर स्वस्ति पथ तैयार हो।
अपने जीवन का सरल व्यवहार हो।
होश आ जाए दुःखी इन्सान को।।

फिर जमाने में हवा ऐसी चले।
भावना शुभ कर्म की फूले–फले।
वेद के प्रकाश की ज्योति जले।
प्यार के सांचे में फिर जीवन ढले।
संस्कृति जीवित रहे संकट टले।
कोई झुठलाए न वैदिक ज्ञान को।।

वेद प्रकाश शर्मा धारीवाल
103 अंकुर–वी, हालर, वलसाड–396001
गुजरात

जीवन की उन्नति के लिए कुछ अनमोल विचार

उन्नति की सम्पूर्ण ऊँचाइयों को छूने का सोपान विद्या है। विद्या वही, जो ईश्वर की सम्पूर्ण सृष्टि का यथावत् ज्ञान करवाये। सफलता प्राप्त करने का सबसे बड़ा साधन समय का सद्उपयोग है। शरीर व आत्मा को ठीक रखने के लिए धन नहीं अपितु संयम–नियम–सदाचार युक्त मर्यादित रहना जरूरी है।

किसी भी श्रेष्ठ कार्य को कल पर छोड़ना उन्नति में सबसे बड़ी बाधा है। किसी भी घर–परिवार–समाज व राष्ट्र के नियमानुसार अनुशासन में रहने से संगठन शक्ति बढ़ती है। सार्वजनिक नियमों का उल्लंघन करने से समाज व राष्ट्र की बहुत बड़ी हानि होती है। स्वार्थ लालच की जननी है। इससे व्यक्ति का पतन हो जाता है। परमार्थी व्यक्ति स्वयं कष्ट सहकर भी दूसरों को कष्ट नहीं देता। प्राकृतिक ऋण से उऋण होने के लिए प्रत्येक गृहस्थी को दैनिक यज्ञ करना अनिवार्य है। अपने कर्त्तव्य का ठीक पालन करना सबसे बड़ा धर्म है।

आचार्य रामसुफल शास्त्री हाँसी
मो. 9416034759–9466472375

****

सूर्य नमस्कार और चीन गणराज्य

चीन गणराज्य में सूर्य उर्जा का सदुपयोग विश्व में सबसे ज्यादा हो रहा है। चीन में समस्त उद्योग, विद्यालय, अस्पताल, घरेलू उपयोग में सोलर उर्जा का उपयोग व्यापकता से होने लगा है। आकड़ों के अनुसार भारत में चीन के मुकाबले केवल 3 प्रतिशत उर्जा का उपयोग हो रहा है? जबकि चीन में 80 प्रतिशत उर्जा है।

हालांकि जापान, फ्रांम, जर्मनी आदि देशो में भी सोलर उर्जा का उपयोग तेजी से बढ़ा रहा है परन्तु चीन की सोलर उर्जा की तकनीक सबसे विकसित और सरल है। चीन के सहयोग से पाकिस्तान की राष्ट्रीय एसेम्बली में भी सोलर उर्जा का उपयोग होने लगा है। सोलर उर्जा असीमित है और सस्ती है। चीन में सोलर उर्जा के अतिरिक्त पवन उर्जा को भी विशेष महत्व दिया जा रहा है।

यह खेद है कि भारत में हम सूर्य नमस्कार तक ही सीमित हैं हमारे देश में भी सोलर उर्जा के उपयोग भी अपार सम्भावनायें व्याप्त हैं। जरूरत केवल वैज्ञानिक तकनीक को विकसित करने की है। सोलर उर्जा में प्रदूषण को भी नियन्त्रित किया जा सकता है।

कृष्णा मोहन गोयल,
अमरोहा

****

महर्षि दयानन्द सरस्वती पर विशेष कार्यक्रम सत्यता के बोध की ईश्वर से प्रार्थना

आज आर्य समाज खलासी लाईन के प्रांगण में यज्ञ हुआ। मुख्य यजमान डॉ. राजवीर वर्मा सपत्नी एवं आर्य समाज खलासी लाईन के प्रधान श्री विजय कुमार गुप्ता रहे। यज्ञ वैदिक विद्वान प्रियवर्त्त शास्त्री जी के पुरोहित्य में हुआ। यज्ञीय प्रार्थना के उपरांत वैदिक भजनोपदशेक श्री अमरेश आर्य ग्राम चंदेना ने भजनों के माध्यम से वातावरण को भक्तिमय करते हुए कहा– करूँ नित–नित तेरा ध्यान यही है प्रार्थना मेरी, मिले भक्ति का मुझको दान यही है प्रार्थना मेरी। उन्होंने कहा पीछे पछताने व रोने से बेहतर है शुरू से ही प्रभु के साथ जुड़े रहने की आदत बनाएँ और कहा वृद्धावस्था में चाहकर भी हम प्रभु चिंतन नहीं कर पाते क्योंकि हमने शुरू से ही प्रार्थना नही की होती। प्रभु चिंतन से पहाड़ जैसा दुख भी राई समान छोटा लगता है। जो रात्रि हमारा कल्याण कर दे वही शिवरात्रि है। महर्षि दयानन्द सरस्वती सच्चे शिव को प्राप्त करने के लिये अडिग रहे और महर्षि जी के अज्ञान, अंधकार व पाखण्ड को दूर करने का अंतिम श्वांस तक काम किया। तत्पश्चात् आर्य शिक्षा निकेतन के छात्र/छात्राओं ने अपने–अपने भजन सुनाए।

मंच संचालन आर्य समाज खलासी लाइन के मंत्री श्री रविकांत राणा जी ने किया। तत्पश्चात् शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

आर्य समाज के पुनरुत्थान से सम्बद्ध झाँकी प्रतियोगिता में डी.ए.वी. सूरजपुर प्रथम

महर्षि दयानन्द जी की जयन्ती के उपलक्ष्य में आर्य समाज द्वारा आयोजित किए जा रहे साप्ताहिक कार्यक्रमों में जहाँ भजन, प्रवचन एवं विविध कार्यशालाओं का आयोजन किया जा रहा था वहीं राष्ट्र निर्माण में आर्य समाज के अभूतपूर्व सहयोग पर विविध विद्यालयों द्वारा झाँकी प्रतियोगिता में भी सक्रिय भागीदारी की गई। इस अवसर पर राष्ट्र निर्माण एवं पुनरुत्थान विषय पर प्रस्तुत झाँकी के लिए डी.ए.वी. सूरजपुर को

प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। प्राचार्या डॉ. ममता गोयल ने सैक्टर 7, चण्डीगढ़ आर्य समाज में आयोजित विशिष्ट समारोह के दौरान यह पुरस्कार ग्रहण किया।

प्राचार्या डॉ. ममता गोयल ने समस्त शिक्षकों एवं छात्रों का उत्साहवर्धन करते हुए कहा कि आज के परिवेश में राष्ट्र प्रगति में छात्र तभी अपना सक्रिय योगदान दे पायेंगे जब वे नव निर्माण की मुख्य धारा में सम्मिलित हो।

डी. ए. वी. सैंनटरी पब्लिक स्कूल नाभा में स्वामी दयानन्द पर आयोजन

डी.ए.वी. सैंटनरी पब्लिक स्कूल नाभा एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब के तत्वावधान में विद्यालय की प्रधानाचार्य मंजुला सहगल जी की अध्यक्षता में विद्यालय द्वारा आर्य समाज के संस्थापक और महान समाज सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 193 वें जन्मोत्सव और बोधोत्सव का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर सर्वप्रथम विद्यालय की प्रातः कालीन सभा में विद्यालय के छात्रों ने स्वामी दयानन्द के जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया की किस प्रकार स्वामी जी का जीवन समाज सेवा एवम् राष्ट्र सेवा को समर्पित रहा।

इस अवसर पर विद्यालय में पांच कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया। जिसे विद्यालय के धर्माचार्य रोहित शास्त्री ने वैदिक रीति से सम्पन्न करवाया। इस यज्ञ में विद्यालय की सभी कक्षाओं के छात्राओं व उनके अध्यापकों ने भाग ग्रहण करते हुए पावन वेद मंत्रों द्वारा आहुतियां दी।

जन्मोत्सव एवम् बोधोत्सव के पावन अवसर पर विद्यालय की प्रधानाचार्या मंजुला सहगल जी ने समस्त नगर वासियों व विद्यालय परिवार को महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 193 वें जन्मोत्सव एवम् बोधोत्सव की बधाई दी।

अंत में सभी को हवन के पश्चात् छात्रों एवम् अध्यापकों को प्रसाद वितरण करके दयानन्द जन्मोत्सव बोधोत्सव की बधाई दी।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय...

का सन्देश दिया ताकि वर्तमान कलुषित माहौल की नकारात्मकता से परे एक मूल्य आधारित आदर्श समाज की सरंचना की जा सके। स्वामी दयानन्द स्टडीज सेंटर के इंचार्ज एवं संगोष्ठी के कोऑर्डिनेटर अजय खोसला ने संगोष्ठी का संक्षिप्त का संक्षिप्त परिचय देते हुए आधुनिक युग में वैदिक विचारधारा की प्रासंगिकता पर अपने विचार रखे।

प्रोफेसर आर.के. देसवाल ने अपने कुंजीवत भाषण में स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन और दर्शन पर बेहद प्रभावोत्पादक विचार प्रस्तुत किये। रिसोर्स पर्सन डॉक्टर राजेश कुमार एवं डॉक्टर जी.एस.बाजवा ने वैश्विक पटल पर सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता की अवधारणा की दिनों बढ़ रही स्वीकार्यता पर प्रकाश डालने के साथ–साथ विभिन्न उदाहरण देकर आर्य समाज की महानता पर पर प्रकाश डाला। श्री रवि भटनागर ने वेदों की महानता एवं दैनिक जीवन में वैदिक ज्ञान की उपयोगिता पर अपने उदगार व्यक्त किये। संगोष्ठी में दो तकनीकी सत्र समान्तर चले जिसमें लगभग 70 से अधिक प्रतिनिधियों ने शोध पत्र प्रस्तुत किये। 105 प्रतिभागियों ने भाग लिया एवं वैदिक दर्शन पर अपने अमूल विचार प्रस्तुत किये। संगोष्ठी के समापन सत्र में कोऑर्डिनेटर अजय खोसला ने मुख्यातिथि, विद्वान वक्ताओं, प्राचार्या जी एवं प्रतिनिधियों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया। संगोष्ठी का सार्थक समापन राष्ट्रीय गान के साथ किया गया।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 17/18-05-2017

डी.ए.वी. पश्चिमी पटेल नगर में पृथ्वी दिवस समारोह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पश्चिमी पटेल नगर में पृथ्वी दिवस मनाया गया। 'धरती माँ की रक्षा करो तथा अपनी आने वाली पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल बनाओं' इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था। इसी बात का महत्व समझाने के लिए प्रत्येक कक्षा के बच्चों ने अलग– अलग कार्यक्रम प्रस्तुत किए। नन्हें–मुन्ने बच्चों ने धरती का चित्र बनाकर सुन्दर–सुन्दर रंग भरे, पेड़–पौधे बनाए तथा धरती पर नदियों का जल दिखाया। प्रथम और द्वितीय कक्षा के बच्चों

ने अपने हाथों में बैनर लेकर पाठशाला में रैली निकाली। बड़े बच्चों ने धरती माँ की विशेषताएँ बताते हुए अपने भाषण में बताया कि धरा हमें सब कुछ देती है, देती ही जाती है हमारा पालन पोषण करती है, उसकी रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। कक्षा छठीं के बच्चों ने Mime (मूक प्रदर्शन) से जल संरक्षण का महत्त्व बताया वातावरण को शुद्ध एवं पवित्र बनाए रखने के लिए प्रधानाचार्या रश्मि गुप्ता जी के साथ वेद मंत्रों का उच्चारण करते हुए हवन किया गया तथा शांति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

हंसराज महिला महाविद्यालय में वार्षिक दीक्षांत समारोह

हंसराज महिला महाविद्यालय के प्रागंण में 85वें (सत्र 2014–15) का वार्षिक दीक्षांत समारोह का शुभारंभ मुख्यातिथि ब्रिगेडियर आई.एम.एस. परमार, ग्रुप कमांडर, जालंधर मुख्यालय, एन. सी. सी; विशिष्टातिथि डॉ. एम.सी. शर्मा, कोषाध्यक्ष डीएवी प्रबंधकर्त्री समिति, नयी दिल्ली; स्थानीय समिति के चेयरमैन न्यायमूर्ति एन. के. सूद व कॉलेज प्राचार्या द्वारा वेद मंत्रों के सात्विक वातावरण में ज्ञान व प्रकाश की प्रतीक ज्योति प्रज्ज्वलित करके हुआ।

दीक्षांत समारोह में 1083 छात्राओं को डिग्री प्रदान की गयी, जिसमें 846 स्नातक व 172 स्नातकोत्तर छात्राएं सम्मिलित थी। यहाँ उल्लेखनीय है कि 65 छात्राओं को उनकी विशिष्ट

उपलब्धियों के लिए डिस्टिक्शन व रोल ऑफ ऑनर से सम्मानित किया गया।

प्राचार्या डॉ. (श्रीमती) अजय सरीन ने कॉलेज की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए बताया कि हाल ही में कॉलेज को ''फ्लैगशिप'' अवार्ड से अलंकृत किया गया है। कॉलेज की उपलब्धियों का ज़िक्र करते हुए उन्होंने विभिन्न एकादमिक डिग्रियों को प्राप्त करने वाली स्नाातिकाओं को भावी जीवन में 'अच्छे मानव' बनने के लिए प्रेरित किया, जो समय की सबसे बड़ी मांग है। डॉ. एम. सी. शर्मा ने कॉलेज को नित नूतन प्रगति के पथ पर अग्रसर होने की बधाई दी तथा कहा कि 'बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओ' का नारा आर्य समाज ने वर्षों पहले देकर नारी शिक्षण संस्थाओं की रचना की थी तथा ऐसी संस्थाएं इस मिशन की ओर सफलतापूर्ण कार्यरत हैं।

अपने अध्यक्षीय भाषण में बिग्रेडियर परमार ने जीवन में सही दृष्टिकोण अपनाने पर बल देते हुए कहा कि आपके अस्सी प्रतिशत चुनौतियां आपके सकारात्मक दृष्टिकोण से हल हो जाती है। स्वयं अपने उज्जवल जीवन के लिए स्वयं सर्जक बने और इसके लिए 'शेरनी बनो', मुश्किलें स्वयं आपके समक्ष छोटी हो जाएंगी। इस अवसर पर कॉलेज स्टाफ टैलीफोन डायरैक्टरी का भी विमोचन किया गया। समारोह के मुख्यातिथियों को वैदिक परम्परा का प्रतीक ओ३म् ध्वज तथा स्मृति चिन्ह भेंट स्वरूप प्रदान कर सम्मानित किया गया। भूतपूर्व न्यायमूर्ति श्री एन. के. सूद ने आए हुए अतिथियों को धन्यवाद ज्ञापन किया।

डी.ए.वी. साहिबाबाद में महात्मा हंसराज जयंती पर विश्व शांति महायज्ञ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद मानवता के मौन साधक महात्मा हंसराज जयंती के उपलक्ष्य पर विश्व शांति महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर कक्षा सातवीं एवं आठवीं के विद्यार्थियों ने शिखर पुरुष एवं प्रतिज्ञ वीर महामना महात्मा हंसराज को स्मरणांजलि स्वरूप विश्व शांति महायज्ञ में पावन आहुतियाँ समर्पित करते हुए महात्मा जी के जीवन चरित पर कथा वाचन का आयोजन किया। विद्यार्थियों ने महात्मा

हंसराज जी के जीवन के अनेक प्रसंगों के उद्धृत करते हुए उनसे प्रेरणा लेने का संकल्प लिया। महाव्रती महात्मा हंसराज जी का जीवन ईमानदारी, शुचिता, कर्मठता एवं निष्काम सेवा का पर्याय था विद्यालय के युवा छात्रों ने महात्मा जी के जीवन मूल्यों को अपना आदर्श बनाने की प्रतिज्ञा लेते हुए उनका अनुसरण करने का संकल्प लिया।

इस अवसर पर विद्यालय प्रधानाचार्य श्री वी.के. चोपड़ा जी ने त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज जी को भावपूर्ण श्रद्धाजलि समर्पित करते हुए कहा कि महात्मा हंसराज जी का जीवन लोगो के लिए प्रेरणा है, विशेषकर युवा पीढी के लिए।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**